# ancel UI



भगवती श्रीलक्ष्मीजी





भगवान् श्रीरामकी स्तुति करते हनुमान्जी

ॐ पूर्णमद: पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥



वन्दे वन्दनतुष्टमानसमितप्रेमप्रियं प्रेमदं पूर्णं पूर्णकरं प्रपूर्णनिखिलैश्वर्येकवासं शिवम्। सत्यं सत्यमयं त्रिसत्यविभवं सत्यप्रियं सत्यदं विष्णुब्रह्मनुतं स्वकीयकृपयोपात्ताकृतिं शङ्करम्॥

वर्ष १२ गोरखपुर, सौर मार्गशीर्ष, वि० सं० २०७५, श्रीकृष्ण-सं० ५२४४, नवम्बर २०१८ ई० पूर्ण संख्या ११०४

#### हनुमत्कृत श्रीरामस्तुति

नमो रामाय हरये विष्णवे प्रभविष्णवे। आदिदेवाय देवाय पुराणाय गदाभृते॥ विष्टरे पुष्पके नित्यं निविष्टाय महात्मने। प्रहृष्टवानरानीकजुष्टपादाम्बुजाय ते॥ निष्पिष्टराक्षसेन्द्राय जगदिष्टविधायिने। नमः सहस्रशिरसे सहस्रचरणाय च॥

सहस्राक्षाय शुद्धाय राघवाय च विष्णवे । भक्तार्तिहारिणे तुभ्यं सीतायाः पतये नमः॥

[ श्रीहनुमान्जी बोले—]सबपर शासन करनेवाले, सर्वव्यापी, श्रीहरिस्वरूप श्रीरामचन्द्रजीको नमस्कार है। आदिदेव पुराणपुरुष भगवान् गदाधरको नमस्कार है। (अष्टदल) कमलपर सिंहासनपर नित्य विराजमान होनेवाले महात्मा श्रीरघुनाथजीको नमस्कार है। प्रभो! हर्षमें भरे हुए वानरोंका समुदाय आपके युगल

चरणारिवन्दोंकी सेवा करता है, आपको नमस्कार है। राक्षसराज रावणको पीस डालकर सम्पूर्ण जगत्का अभीष्ट सिद्ध करनेवाले श्रीरामचन्द्रजीको नमस्कार है। आपके सहस्रों मस्तक, सहस्रों चरण और सहस्रों

नेत्र हैं; आप विशुद्ध विष्णुस्वरूप राघवेन्द्रको नमस्कार है। आप भक्तोंकी पीड़ा दूर करनेवाले तथा सीताके प्राणवल्लभ हैं, आपको नमस्कार है।[स्कन्दपुराण]

कल्याण, सौर मार्गशीर्ष, वि० सं० २०७५, श्रीकृष्ण-सं० ५२४४, नवम्बर २०१८ ई० विषय-सूची		
१ - हनुमत्कृत श्रीरामस्तुति	१४- विकासका भयावह पक्ष (श्रीगणेशदत्तजी दूबे)	
३- 'जो मोहि राम लागते मीठे' [कविता]२६ ————	२८− मनन करने योग्य	
चित्र-	6/	
१ - भगवती श्रीलक्ष्मीजी	७- नारदजीद्वारा भगवान् विष्णुको शाप ( '' )	
एकवर्षीय शुल्क ₹२५०  जय जय विश्वरूप हरि जय जय विराट् जय जगत्पते विदेशमें Air Mail ) वार्षिक USS	ि। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय।। । जय हर अखिलात्मन् जय जय।। । गौरीपति जय रमापते।। \$ 50 (₹ 3000) { Us Cheque Collection \$ 250 (₹ 15000) { Charges 6\$ Extra	
संस्थापक — <b>ब्रह्मलीन परम श्र</b> ब आदिसम्पादक — <b>नित्यलीलालीन</b> सम्पादक — <b>राधेश्याम खेमका,</b> सहर	द्वेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार सम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़ इ लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित	
website : gitapress.org e-mail : kalya	an@gitapress.org 09235400242/244	

संख्या ११ ] कल्याण याद रखों - संसारमें तुम्हारे लिये जो कुछ हो बढ़ाकर यदि तुम मनको अपने वशमें कर लोगे और रहा है, सब दयामय, प्रेममय और न्यायकारी भगवान्की उसे श्रीभगवान्के स्वरूपचिन्तनमें लगा दोगे तो तुम्हें सुनिश्चित व्यवस्थाके अन्दर उन्हींके मंगल-विधानसे तुरन्त शान्ति मिल जायगी। ही हो रहा है। वे मंगलमय हैं, इसलिये उनके मंगल-*याद रखो*—पापका अभ्यास बहुत बुरा होता है, विधानके मूल निर्झरसे सदा आनन्दका स्रोत बहता परंतु जबतक मनुष्यकी पापमें पापबुद्धि है, पाप बन रहता है। प्रत्येक विपत्तिमें, प्रतिकूलतामें, पीडामें, जानेपर उसके मनमें पश्चात्ताप होता है, तबतक वह पराभवमें, यहाँतक कि मृत्युमें भी उनकी मंगलमयता पापोंसे बचनेका प्रयत्न करता है और अन्तमें, एकमात्र भरी रहती है। इस बातपर विश्वास कर लोगे तो तुम्हें भगवान् ही पापोद्धारक और परम शरण्य हैं, ऐसा तुरन्त शान्ति मिल जायगी। निश्चय करके अशरणशरण पतितपावन भगवान्को *याद रखो*—भगवान् तुम्हारे परम सृहद् हैं, सर्वज्ञ पुकारता है। पश्चात्तापयुक्त पापीके लिये दयामय हैं और सर्वशक्तिमान हैं। उनके समान या उनसे बढकर भगवानुका द्वार सदा खुला रहता है। वे उसे शरण तुम्हारा कल्याण चाहनेवाला, किस बातमें तुम्हारा देकर अपना लेते हैं और उनके अपनाते ही वह यथार्थ कल्याण है-इस रहस्यको जाननेवाला और पापमुक्त होकर धर्मात्मा बन जाता है तथा सनातन कल्याण करनेवाला दूसरा कोई नहीं है, इस बातपर शान्तिको पा जाता है। अतएव तुम भी यदि इसी प्रकार विश्वास कर लोगे तो तुम्हें तुरन्त शान्ति मिल जायगी। भगवान्पर अनन्य विश्वास करके उनका भजन करोगे याद रखों — जो कुछ भी दु:ख, अशान्ति और तो तुम्हें तुरन्त शान्ति मिल जायगी। पाप है, सारा कामनामें है। कामनाका मूल है आसक्ति। याद रखो-भगवान्के स्वरूप-तत्त्वको जाने आसक्तिका मूल है इस जड शरीर तथा नाममें मेरेपनका बिना मनुष्य दु:खसागरसे नहीं तर सकता। इस ज्ञानकी भाव। तुम अपनेको भगवानुके हाथका यन्त्र समझकर प्राप्तिमें सबसे पहली आवश्यक वस्तु है श्रद्धा। श्रद्धासे यदि कामना, आसक्ति, ममत्व और अहंकारका त्याग तत्परता आती है और तत्परतासे इन्द्रियोंका संयम होता कर दोगे तो तुम्हें तुरन्त शान्ति मिल जायगी। है। अतः यदि तुम 'भगवान्के स्वरूप' में 'उनका स्वरूपज्ञान साधकको प्राप्त होता है' इस सिद्धान्तमें याद रखो-जबतक विषयोंमें, कर्मोंमें और कर्म-फलमें तुम्हारी ममता और आसक्ति है, तबतक और 'तुमको अवश्य प्राप्त हो सकता है' इस अपनी तुम्हारे मनमें कामनाका अभाव नहीं हो सकता, न योग्यतामें श्रद्धा प्राप्त कर लोगे तो तुम्हें वह ज्ञान प्राप्त हो जायगा और तुरन्त शान्ति मिल जायगी। तबतक तुम कर्मफलका त्याग ही कर सकते हो। अतएव तुम यदि भगवानुके स्वरूपका महत्त्व समझकर याद रखो-भगवान्की अनन्य शरणागित ऐसा ममता, आसक्ति और कामनाका त्याग कर दोगे तो तुम्हें महान् साधन है, जो मनुष्यको सारे पाप-तापोंसे मुक्त तुरन्त शान्ति मिल जायगी। करके अनायास ही परम शान्तिका अधिकारी बना देता याद रखो—जबतक तुम्हारा मन विषयोंमें भटकता है। अतएव सारी आशाओं और सारे भरोसोंको छोड़कर एकमात्र प्रभुके शरण हो जाओ। फिर तुम्हें तुरन्त ही रहेगा और भगवान्में नहीं लगेगा, तबतक तुम कभी शान्त और सुखी नहीं हो सकोगे। पर भजनका अभ्यास आत्यन्तिक और शाश्वती शान्ति मिल जायगी। 'शिव'

भगवती श्रीलक्ष्मीजी आवरणचित्र-परिचय भगवती लक्ष्मीको कृतार्थ करनेके लिये स्वयं भगवान् विष्णु पधारे। भगवान्ने देवीसे वर माँगनेके लिये कहा।

सबकी मूल भगवती लक्ष्मी ही हैं। ये भगवान् विष्णुकी पत्नी हैं। भगवती लक्ष्मी कमलवनमें निवास करती हैं, कमलपर बैठती हैं और हाथमें कमल ही धारण करती हैं। समस्त सम्पत्तियोंकी अधिष्ठात्री ये देवी शुद्ध सत्त्वमयी हैं। भगवान् जब-जब अवतार लेते हैं, तब-तब भगवती महालक्ष्मी भी अवतीर्ण होकर उनकी प्रत्येक लीलामें सहयोग देती हैं। इनके आविर्भावका इतिहास इस प्रकार है—

देवीकी जितनी भी शक्तियाँ मानी गयीं हैं, उन

महर्षि भृगुकी पत्नी ख्यातिके गर्भसे एक त्रिलोकसुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई। वह समस्त शुभ लक्षणोंसे सुशोभित थी। इसलिये उसका नाम लक्ष्मी रखा गया। धीरे-धीरे बड़ी होनेपर लक्ष्मीने भगवान् नारायणके गुण-प्रभावका वर्णन सुना। इससे उनका हृदय भगवान्में

अनुरक्त हो गया। वे भगवान् नारायणको पतिरूपमें प्राप्त

करनेके लिये समुद्रतटपर घोर तपस्या करने लगीं। उन्हें तपस्या करते-करते हजार वर्ष बीत गये। उनकी परीक्षा लेनेके लिये देवराज इन्द्र भगवान् विष्णुका रूप धारण करके लक्ष्मी देवीके पास आये और उनसे वर माँगनेके

उनकी प्रार्थनापर भगवान्ने उन्हें विश्वरूपका दर्शन कराया। तदनन्तर लक्ष्मीजीकी इच्छानुसार भगवान् विष्णुने

उन्हें पत्नीरूपमें स्वीकार किया। लक्ष्मीजीके प्रकट होनेका दूसरा इतिहास इस प्रकार है-एक बार महर्षि दुर्वासा घूमते-घूमते एक मनोहर

वनमें गये। वहाँ एक विद्याधरीने उन्हें दिव्य पुष्पोंकी एक माला भेंट की। माला लेकर उन्मत्त वेशधारी मुनिने उसे

अपने मस्तकपर डाल लिया और पुन: पृथ्वीपर भ्रमण करने लगे। इसी समय दुर्वासाजीको देवराज इन्द्र दिखायी दिये। वे ऐरावतपर चढ़कर आ रहे थे। दुर्वासाने वह माला

इन्द्रको दे दी। देवराज इन्द्रने उसे लेकर ऐरावतके मस्तकपर डाल दिया। ऐरावतने मालाकी तीव्र गन्धसे आकर्षित होकर उसे सूँड्से उतार लिया और पैरोंतले रौंद

डाला। मालाकी दुर्दशा देखकर महर्षि दुर्वासा क्रोधसे जल उठे और उन्होंने इन्द्रको श्रीभ्रष्ट होनेका शाप दे दिया। उस शापके प्रभावसे इन्द्र श्रीभ्रष्ट हो गये और सम्पूर्ण देवलोकपर असुरोंका शासन हो गया। समस्त

गये। भगवान् विष्णुने उन लोगोंको असुरोंके साथ मिलकर क्षीरसागरको मथनेकी सलाह दी। भगवान्की आज्ञा पाकर देवगणोंने दैत्योंसे सन्धि करके अमृत-प्राप्तिके लिये समुद्र-मन्थनका कार्य आरम्भ किया।

कामधेनु, उच्चैश्रवा नामक अश्व, ऐरावत हाथी, कौस्तुभमणि, कल्पवृक्ष, अप्सराएँ, लक्ष्मी, वारुणी, चन्द्रमा, शंख, शार्ङ्ग धनुष, धनवन्तरि और अमृत प्रकट हुए। क्षीरसमुद्रसे जब भगवती लक्ष्मी देवी प्रकट हुईं, तब वे खिले हुए श्वेत

मन्थन करनेपर क्षीरसागरसे क्रमश: कालकृट विष,

देवता असुरोंसे संत्रस्त होकर इधर-उधर भटकने लगे।

ब्रह्माजीकी सलाहसे सभी देवता भगवान् विष्णुकी शरणमें

कमलके आसनपर विराजमान थीं। उनके श्रीअंगोंसे दिव्य कान्ति निकल रही थी। उनके हाथमें कमल था। लक्ष्मीजीका दर्शन करके देवता और महर्षिगण प्रसन्न हो गये। उन्होंने

लिये कहा—लक्ष्मीजीने उनसे विश्वरूपका दर्शन करानेके वैदिक श्रीसूक्तका पाठ करके लक्ष्मी देवीका स्तवन किया। लिमोत्तवता अस्तर कार्यको सार्वे अस्तर होना सार्वे हैं। अनुत्र होना समार्थे हे स्वर्ध के स्वर्ध के स्वर्ध के स संख्या ११] भगवानुकी दया भगवान्की दया (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) भगवान्की दयाके विषयमें कुछ चर्चा की जाती कबहुँक करि करुना नर देही । देत ईस बिनु हेतु सनेही॥ है। जब हम भगवानुकी दयाकी ओर ध्यान देते हैं तो चार प्रकारकी चौरासी लाख योनियोंमें भ्रमण करते ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान् दयाके सागर हैं। किंत् हुए जीवको दु:खित और आर्त देखकर बिना ही कारण वस्तुत: ऐसा कहना भी स्तुतिमें निन्दा ही है; क्योंकि दया और प्रेम करनेवाले भगवान् उसे मनुष्यका शरीर देते सागरकी तो एक सीमा होती है और भगवान्की दया हैं। दयाके पात्र न होनेपर भी हमलोगोंपर भगवान्ने दया सीमारहित है। हमलोगोंको दुनियामें दयाके नामसे जो की, जिससे हमें यह मनुष्यशरीर मिला। यह मनुष्यका चीज दिखायी देती है, वह सारी दुनियाकी दया मिलकर शरीर भगवान्ने इसीलिये दिया कि मनुष्य ही इस बातको भी उस दयासागरकी एक बुँदके बराबर भी नहीं हो समझ सकता है कि प्रभु बिना ही कारण दया और प्रेम सकती; क्योंकि हमलोगोंमें जो दया है, यह तो एक करनेवाले हैं, किंतु यह बात समझमें नहीं आयी तो सात्त्विक भाव है और भगवानुकी दया चिन्मय होनेसे भगवान्का वह दया और प्रेमयुक्त परिश्रम सार्थक नहीं गुणोंसे अतीत है। संसारके सब लोगोंमें जो दया है, वह हुआ; अतः उसे सार्थक करना चाहिये। भगवान्की उस दयाके एक बिन्दुका आभासमात्र है-हमलोग मनुष्य कहलाते हैं, अतः हममें मनुष्यत्व प्रतिबिम्बमात्र है, जैसे बिम्ब तथा प्रतिबिम्बका अन्तर है, तो होना ही चाहिये। इतना उपकार करनेवाले भगवान्के प्रति हमें कृतघ्न तो नहीं होना चाहिये, उनके गुणोंको इसी प्रकार भगवान्की दया और हमलोगोंकी दयाका अन्तर है। भगवानुकी दया अपरिमित और अनन्त है। और उपकारोंको तो नहीं भुलाना चाहिये। भगवान् बिना आकाशका भी कहीं अन्त आ सकता है, किंतु भगवान्की ही कारण दया और प्रेम करनेवाले हैं, यह बात गीतामें दयाका तो अन्त आता ही नहीं। जब मनुष्यको वास्तवमें भी कही है-इस बातका ज्ञान हो जाता है कि भगवान् ऐसे दयालू सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छिति। तथा प्रेमी हैं, तब वह प्रेम और दयाके तत्त्व-रहस्यको (4179) समझ जाता है और फिर वह समझनेवाला भक्त भी उसी 'मैं सब प्राणियोंका सुहृद् हूँ, यह जानकर मनुष्यको शान्ति मिलती है।' सुहृद्का अभिप्राय यह है कि समय सबका सुहृद् बन जाता है अर्थात् वह परम दयालु और परम प्रेमी बन जाता है। भगवान् परम प्रेमी और भगवान् बिना ही कारण प्रेम और दया करनेवाले हैं। परम दयालु हैं, इस रहस्यको समझनेवाला प्रेमी भक्त जब हमलोगोंको परम शान्ति नहीं मिली तो भगवान् सुहृद् हैं, इस बातको हमलोग कहाँ समझे? जो इस प्रभुसे एक क्षण भी पृथक् नहीं रह सकता, प्रभुके बिना उसका जीवन भार हो जाता है। फिर भगवानुसे मिले तत्त्वको समझ जाता है, उसको तो समझनेके साथ ही बिना उसके प्राण कैसे रह सकते हैं? क्योंकि वह यह इतनी प्रसन्नता, इतनी शान्ति और इतना आनन्द होता है समझता है कि 'भगवान् परम दयालु और परम प्रेमी हैं कि उसे अपने-आपका ही ज्ञान नहीं रहता। और फिर और वे सब जगह हैं तथा श्रद्धालु और प्रेमीको मिलते वह स्वयं सबका सुहृद् हो जाता है। भगवान्ने भक्तोंके हैं और इतने भारी दयाके सागर हैं कि वे सदा सभीपर लक्षण बतलाते हुए कहा है-हेतुरहित दया और प्रेम रखते हैं।' तुलसीदासजीने भी अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च। कहा है— (गीता १२।१३) 'जो सारे भूतोंमें द्वेष-भावसे रहित है और सभी आकर चारि लाख चौरासी। जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी।। प्राणियोंपर हेतुरहित दया और प्रेम करनेवाला है, (वह फिरत सदा माया कर प्रेरा। काल कर्म सुभाव गुन घेरा॥

भाग ९२

इस सुहृदताके रहस्यको हमलोग समझ जायँ तो प्रकारका अपने हृदयमें भाव होना चाहिये और इस हम भी सबके सुहृद बन सकते हैं। इस नियमके होते भावसे भावित होकर भगवानुसे मिलनेके लिये हमको

हुए भी यदि हम इस लाभसे वंचित हैं तो हमारे लिये आतुर हो जाना चाहिये।
बहुत ही लज्जा, शोक और दु:खकी बात है। इस लाभसे लड़का जब आतुर हो जाता है तो दयालु माँ उस

वंचित रहनेमें केवल श्रद्धा-विश्वासकी कमी ही कारण लड़केको उठाकर हृदयसे लगा लेती है। भगवान्की दया है तथा श्रद्धा-विश्वासकी कमीमें हमारी मूर्खता यानी तो मॉंकी अपेक्षा अनन्तगुणी अपार है। यह हमें मालूम अविवेक ही कारण है। इसलिये हमलोगोंको सहदताका हो जाय तो हमारी आतरता इतनी बढ़ सकती है कि

अविवेक ही कारण है। इसलिये हमलोगोंको सुहृदताका हो जाय तो हमारी आतुरता इतनी बढ़ सकती है कि रहस्य जाननेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा करनी चाहिये। जबतक भगवान् हमें उठाकर हृदयसे न लगा लें, तबतक उपर्युक्त बातोंपर श्रद्धा-विश्वास करना चाहिये, फिर हमारा रोना बन्द ही न हो। भगवान् केवल हमारी

अपने–आप ही भगवान्में श्रद्धा–विश्वासकी वृद्धि होकर आतुरता, श्रद्धा, प्रेम, भाव और व्याकुलता देखते हैं। इन उनकी प्राप्ति हो सकती है। बातोंको समझकर यदि हम भगवद्भावसे भावित हो जायँ भगवान् हर समय मिलनेके लिये तैयार हैं। इतना तो फिर विलम्बका काम ही क्या है? जैसे बिजलीके

ही नहीं, वे तो लालायित हैं, आतुर हैं। किंतु हमको तार आदि लगकर जब तैयार हो जाते हैं तब स्विच इसपर विश्वास होना चाहिये। जब हमको यह विश्वास दबानेके साथ ही क्षणमात्रमें रोशनी हो जाती है, वैसे ही

हो जायगा कि भगवान् ऐसे प्रेमी और दयालु हैं, तब जब मनुष्य पात्र बन जाता है, तब भगवद्भावसे भावित फिर हम भगवान्को छोड़कर क्षणमात्र भी कैसे जी होनेके साथ ही भगवान्की प्राप्ति हो जाती है।

#### \_\_\_\_\_\_ **उद्यमका जादू** इटलीके क्रेसिन नामक किसानने अपने उद्योगके बदौलत इतनी अच्छी पैदावार की कि लोगोंको अत्यन्त

यह कहकर न्यायाधीशने क्रेसिनको निर्दोष विदाई दी।

#### आश्चर्य होने लगा। उन्होंने सोचा—निश्चय ही यह कोई जादू करता होगा। उन्होंने न्यायालयमें इसकी अपील की। न्यायाधीशने वादीका बयान सुननेके बाद प्रतिवादी किसान क्रेसिनसे पूछा—'इसपर तुम्हारा क्या कहना है?'

क्रासनस पूछा— इसपर तुम्हारा क्या कहना ह*?* क्रेसिनने अपनी एक हृष्ट-पुष्ट लड़की, अपने खेतीके औजार, बैल आदिको अदालतके समक्ष खड़ाकर कहा—'मैं खेत जोत और खाद डाल उसे अच्छा तैयार करता हूँ। मेरी लड़की बीज बोती और पानी आदि

कहा—'मैं खेत जोत और खाद डाल उसे अच्छा तैयार करता हूँ। मेरी लड़की बीज बोती और पानी आदि देकर खेतकी अच्छी देख-रेख करती है। इसी तरह मेरे औजार भी टूटे-फूटे न होकर अच्छे कामलायक

हैं और मेरे बैल देखिये। कितनी लुभावनी जोड़ी है। मैं इन्हें खूब खिलाता-पिलाता, इनकी सेवा-शुश्रूषा करता हूँ। इसीलिये ये हमारे बैल प्रदेशभरमें ख्यातिप्राप्त और बेजोड़ हैं। मेरे खेतमें काफी पैदावार होनेमें ये जिस जादूका असर बताते हैं वह जादू इन्हींमें है। दावा करनेवाले चाहें तो इस जादूका उपयोग कर लें,

ये जिस जादूका असर बताते हैं वह जादू इन्होंमें हैं। दावा करनेवाले चाहे तो इस जादूका उपयोग कर ले तब उन्हें मेरे इस कथनकी सत्यता प्रमाणित होगी।' ये बातें सनकर न्यायाधीशने कहा—'आजतक अनेक अपराधी मेरे सामने आये. पर अपनेपर किये गरं

ये बातें सुनकर न्यायाधीशने कहा—'आजतक अनेक अपराधी मेरे सामने आये, पर अपनेपर किये गये अभियोगोंके निवारणार्थ इतने सबल प्रमाण किसीने भी उपस्थित नहीं किये। इसलिये इनकी जितनी प्रशंसा

अभियोगोंके निवारणार्थं इतने सबल प्रमाण किसीने भी उपस्थित नहीं किये। इसलिये इनकी जितनी प्रशंस् की जाय थोड़ी है।' संख्या ११] ज्ञान ( श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ वीतराग स्वामी श्रीदयानन्दगिरिजी महाराज ) किसी भी वस्तुको जानना 'ज्ञान' कहा जाता है। या नाशको प्राप्त नहीं हुआ। केवल अविद्याकी रात्रिसे जैसे ब्रह्मको पहचानना या अपनी आत्माको जानना ब्रह्मज्ञान ढका (आवृत्त) अवश्य है। बाह्य तृष्णाके संस्कारोंके या आत्माका ज्ञान कहा जाता है। आत्माको या सर्वव्यापक कारण उसका मन्द-मन्द आनन्दयुक्त ज्ञान आविर्भृत ब्रह्मको अपने अन्दर प्रत्यक्ष रूपसे पहचानना, निकटसे नहीं हो रहा, यही कहा जाता है कि अविद्यासे आवृत पहचानना, यही ब्रह्म (आत्मा)-का विज्ञान है। (ढका) होता है। परन्तु विचारद्वारा निद्रा जीतनेपर, ध्यानमें ज्ञान तो किसी वस्तुके विषयमें सुनने या पढनेसे भी हो प्रकट विवेकके जागनेपर, जब तृष्णाके सुखोंसे मन उपेक्षायुक्त (बेखबर) रहे और उस अनन्तमें सब जीवोंके सकता है; परन्तु प्रत्यक्ष साक्षात्कारसे जो ज्ञान होता है, वह विज्ञान है। जैसे कि आसनपर स्थिर होकर मनको बाह्य समान रूपसे अपनी ज्ञान और क्रियाशक्तिके साथ बसे विषयोंसे निवृत्त करके, पुनः सारे संसारकी तृष्णाका निरोध हुए अपने-आपको अपने-आपमें ही प्रकट होनेका करनेपर मन जब जगतुको केवल इसलिये ही नहीं भूलना अवकाश दे। यह बात नहीं कि वह जो निद्रामें अपना या छोड़ना चाहता कि यदि उसे भूलें, तो पुन: ज्ञानशून्य-सा सुखरूप सबके लिये प्रकट करता है, परन्तु जाग्रत् ध्यानमें होकर अपना आपा घोर अविद्याके अन्धकारमें पड़ा हुआ वह अपना सुख आनन्दस्वरूप प्रकट न करे। हाँ! धैर्यकी प्रतीत होता है। ज्ञानशून्य अवस्थामें मनका रमना दुष्कर है। आवश्यकता है। अविद्याके तनावकी (ज्ञानशून्य) अवस्थाको टलने दे। ज्ञानशून्यताका दु:ख क्षण-क्षण या तो निद्रा ही आ जाय तब शान्त-अवस्थाकी अनुभूति चेतनमें होती है या पुन: संसारकी वस्तुओंके संस्कार जाग्रत् अनुभव करता हुआ जाग्रत् रहे। विषय-चिन्तन या बाह्य करके सांसारिक श्रवण, दर्शन इत्यादिके ज्ञानद्वारा अथवा शब्दादि विषयोंको सुननेमें मनको न लगाये। सुननेपर वस्तुओंके चिन्तनद्वारा ज्ञानको पाकर अपने-आपमें रमण भी उनकी उपेक्षा करता जाय और यह प्रतीक्षा भी न करे, परन्तु ज्ञानशून्य या ज्ञान ढका रहनेसे तो मनका स्मरण करे कि कब वह प्रकट आनन्दरूपसे साक्षात् अपने करना दुष्कर प्रतीत होता है। ज्ञानकी झलक दिखाता है। चिरकालके अभ्यासद्वारा ऐसी अवस्थामें प्रगाढ़ (गहरा) अविद्या-साम्राज्य सत्कारपूर्वक ज्ञानके साथ अपनेको जो संयममें रखकर होता है। यदि कोई उद्योगी साधक निद्राको जीतता एकान्तमें अभ्यास करेगा, उसे वह अपने-आप निरावृत हुआ और संसारिक विषयोंकी तृप्तिको क्षणिक और (अविद्यासे रहित रूपसे) अपनी झाँकी दिखायेगा। यही दु:खपूर्ण समझता हुआ ध्यानमें इनके चिन्तनके बिना सच्चा साक्षात्कार है। यही सत्यका ज्ञान परम महत्त्वका स्थिर रहे और बाह्य चिन्तन त्यागनेसे जो दु:खकी अवस्था है। पुनः कालक्रम (साधन करते-करते समय बीतते प्रकट होती है, उस दु:खमें मनको स्थिर रखकर साक्षी रहने)-से यही सबमें समान रूपसे दीखने या अनुभवमें रूपसे देखता रहे, तो उसे इस ज्ञानशून्य-अवस्थाके टलनेका आनेपर, मनुष्यको बाह्य जगत्से पूर्ण रीतिसे मुक्ति मिल क्रमशः अनुभव अपने-आप ही हो जायगा। जब मन जायगी। पुनः संसारमें रमणका मन नहीं रहेगा। जैसे बाह्य चिन्तनसे शून्य होगा, तो ठीक है! ज्ञानशून्य किसीको घरके कोनेमें मधु (शहद) मिल जाय, तो अविद्याकी दशामें अरमण (मनके न लगनेकी दशा)-वह वनमें क्यों भटके ? इसी प्रकार अपने-आपमें प्रत्येक का शिकार हो जाता है और झट बाह्य जगत्के संस्कार अवस्थामें, वृद्धावस्थामें भी यदि आत्मज्ञानसे परमानन्द ही जगाकर रमण करता है। परन्तु जो इस देहको जीवन-या सदा बसी रहनेवाली आनन्दकी अनुभूति और तृप्ति दान दे रहा है और सारे देहमें प्राण और रक्त-संचारकी मिल जाय, तो दूसरोंकी दासता कोई क्यों करेगा? प्रत्युत शक्ति प्रदान कर रहा है, जिससे कि सब अंग अपने दासतासे विमुक्तिका धन्यवाद ही करेगा। यही सच्चा आपमें कार्य करते हुए दृष्टिमें आते हैं, वह कहीं शून्य ज्ञान है। [ प्रेषक—श्रीज्ञानचन्दजी गर्ग ]

िभाग ९२ तृष्णा ( नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार ) तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः। ही-त्यों तृष्णाकी जलन बढ़ती चली जाती है-बुढापा आ गया, इन्द्रियोंकी शक्ति जाती रही, निःस्वो विष्ट शतं शती दशशतं लक्षं सहस्राधिपो सब तरहसे दूसरोंके मुँहकी ओर ताकना पड़ता है, लक्षेशः क्षितिपालतां क्षितिपतिश्चक्रेश्वरत्वं पुनः। परंतु तृष्णा नहीं मिटी। 'कुछ और जी लूँ' बच्चोंके सुरराजतां सुरपतिर्ब्रह्मास्पदं वाञ्छति लिये कुछ और कर जाऊँ, दवा लेकर जरा ताजा ब्रह्मा विष्णुपदं पुनः पुनरहो आशावधिं को गतः॥ होऊँ तो संसारका कुछ सुख और भोग लूँ। मरना (गरुडपुराण २।२।२६, नीतिशतक, अष्टरत्नम् ९) तो है ही, परंतु मेरे हाथसे लड़केका विवाह हो जाय 'जिसके पास कुछ भी नहीं होता, वह चाहता है कि मेरे पास सौ रुपये हो जायँ, सौ हो जानेपर हजारके तो अच्छी बात है, दुकानका काम बच्चे ठीकसे सँभाल लें, इतना-सा उन्हें और ज्ञान हो जाय, बहुत-लिये इच्छा होती है, हजारसे लाख, लाखसे राजाका से वृद्ध पुरुष ऐसी बातें करते देखे जाते हैं। मेरे पद, राजासे इन्द्रका पद, इन्द्र होनेपर ब्रह्माका पद पानेकी एक परिचित वृद्ध सज्जन जो लगभग करोड़पति इच्छा होती है और ब्रह्मा होनेपर विष्णुपदकी कामना माने जाते थे और जिनके युवा पौत्रकी भी संतान होती है। इस तरह तृष्णा उत्तरोत्तर बढती ही रहती है, मौजूद है, एक बार बहुत बीमार पड़े। उनके बचनेकी इसकी कोई सीमा नहीं बाँधी जा सकती। आशा न थी। बड़ी दौड़-धूप की गयी, भाग्यवश मेरे एक मित्र मुझसे कहा करते थे कि 'जब हम उस समय उनके प्राण बच गये। मैं उनसे मिलने निर्धन थे, तब यह इच्छा होती थी कि बीस हजार रुपये हमारे पास हो जायँगे तो हम केवल भगवान्का भजन ही गया। मैंने शरीरका हाल पूछकर उनसे कहा—'अब आपको संसारकी चिन्ता छोड़कर भगवद्भजनमें मन करेंगे, परंतु इस समय हमारे पास लाखों रुपये हैं, वृद्धावस्था लगाना चाहिये। इस बीमारीमें आपकी मरनेकी नौबत हो चली है, लेकिन धनकी तृष्णा किसी-न-किसी रूपमें आ गयी थी, भगवत्कृपासे आप बच गये हैं, अब बनी ही रहती है।' यही तो तृष्णाका स्वरूप है। तो जितने दिन आपका शरीर रहे, आपको केवल जगत्के सुख-भोगोंकी तृष्णाने ही लोगोंको भगवान्से

जा गया था, भगवत्कृपास आप बच गय ह, अब बना हा रहता हा यहा ता तृष्णाका स्वरूप हा तो जितने दिन आपका शरीर रहे, आपको केवल जगत्के सुख-भोगोंकी तृष्णाने ही लोगोंको भगवान्से भगवान्का भजन ही करना चाहिये।' उन्होंने कहा— विमुख कर रखा है। यह पिशाचिनी किसी भी कालमें 'आपका कहना तो ठीक ही है, परंतु लड़का इतना भगविच्चन्तनके लिये मनका पिण्ड नहीं छोड़ती। सदा-होशियार नहीं है, पाँच साल मैं और जिन्दा रहूँ तो सर्वदा सिरपर सवार ही रहती है। रेल, मोटर, गाड़ी, जहाज, घरको कुछ ठीक कर जाऊँ, लड़का भी कुछ और मन्दिर, मस्जिद, दुकान, घर, बाजार, वन और सभा-समझने लगे। मरना तो है ही। क्या करूँ? भजन तो समारोहोंमें सभी जगह यह साथ बनी रहती है। इसीसे

होता नहीं है।' मैंने फिर कहा—'अब आपको घर

क्या ठीक करना है। परमात्माकी कृपासे आपके घरमें

काफी धन है। आपके लड़के भी बुड्ढे हो चले हैं। सर्वसंसारदु:खानां तृष्णैका दीर्घदु:खदा। मान लीजिये, अभी आप मर जाते तो पीछेसे घरको अन्तःपुरस्थमिप या योजयत्यितसंकटे॥ ठीक कौन करता?' उन्होंने सरलतासे कहा—'यह (योगवासिष्ठ, वैराग्यप्र०१७।३२)

श्रीराम कहते हैं-

मनुष्य दुःखोंसे छुटकारा प्राप्त नहीं कर पाता। भगवान्

तो मैं भी जानता हूँ, परंतु तृष्णा नहीं छूटती।' 'संसारमें जितने दु:ख हैं, उनमें तृष्णा ही सबसे इससे ज्ञान होता है कि तृष्णा बुरी तरहसे मनुष्यको अधिक दु:खदायिनी है। जो कभी घरसे बाहर नहीं धरे lindhism Discord Server https://dse.gg/dharma\_l, Mane WITH Hayer Bly Axinash/Sha

संख्या ११] क्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक	
भीषयत्यपि धीरं मामन्धयत्यपि सेक्षणम्।	सही गारि अरु खीझ हाथ झारत घर आयो।
खेदयत्यपि सानन्दं तृष्णा कृष्णेव शर्वरी॥	दूर करत हूँ दौरि, स्वान जिमि परघर खायो॥
(वही १७।१६)	इहि भाँति नचायो मोहि तैं, बहकायो दै लोभतल।
'तृष्णा महती अन्धकारमयी कालरात्रिकी तरह मुझ	अबहुँ न तोहि सन्तोष कहु, तृष्णा तू पापिनि प्रबल॥
धीर पुरुषको भी डरा देती है। वह चक्षुयुक्तको भी अन्धा	तृष्णासे ही इतनी लाञ्छना, निर्लज्जता और इतना
बना देती है और शान्तको भी खेदयुक्त कर देती है।'	अपमान और दु:ख सहन करना पड़ता है। एक दु:खके
विषय-तृष्णामें मतवाले मनुष्योंकी असफलतापर दु:ख	बाद नया दु:खं आनेमें तृष्णा ही प्रधान कारण होती है।
प्रकट करते हुए महाराज भर्तृहरि कहते हैं—	मनुष्य किसी भी अवस्थामें सन्तोष नहीं करता, इसीलिये
उत्खातं निधिशङ्कयक्षितितलं ध्माता गिरेर्धातवो	बारम्बार उसकी स्थिति बदलती रहती है। तृष्णाके मारे
 निस्तीर्णः सरिताम्पतिर्नृपतयो यत्नेन संतोषिताः।	भटकते-भटकते सारी उम्र बीत जाती है, अन्तमें वह
मन्त्राराधनतत्परेण मनसा नीताः श्रमशाने क्षपाः	जैसे-का-तैसा रह जाता है, पीछे हाथ मल-मलकर
प्रातः काणवराटकोऽपि न मया तृष्णोऽधुना मुञ्च माम्॥	पछतानेसे भी कोई लाभ नहीं होता। यदि भाग्यवश धन
(वैराग्यशतक ५)	प्राप्त भी हो जाता है, तब भी वह तृष्णा उसका कुछ
धनकी तृष्णाने क्या-क्या काम नहीं कराये—	विशेष सदुपयोग नहीं होने देती, सारी आयु बातोंमें ही
खोदत डोल्यो भूमि, गड़ीहु न पाई सम्पति।	बीत जाती है।
धौंकत रह्यो पखान, कनकके लोभ लगी मित॥	अतएव बुद्धिमान् मनुष्योंको भोगोंकी तृष्णासे मुँह
गयो सिन्धुके पास, तहाँ मुक्ताहु न पायो।	मोड़कर परमात्माके लिये तृषित होना चाहिये। भोगोंसे
कौड़ी कर नहिं लगी, नृपनको शीश नवायो॥	कभी तृप्ति नहीं होती—' <b>बुझै न काम अगिनि तुलसी</b>
साधे प्रयोग श्मशानमें, भूत प्रेत बैताल सजि।	<b>कहुँ, बिषय-भोग बहु घी ते॥</b> (विनय-पत्रिका)
कितहूँ भयो न वांछित कछू अब तो तृष्णा मोहि तजि॥	अग्निमें घी डालते जाइये, वह और भी धधकेगी।
गड़े हुए धनकी प्राप्तिके लिये जमीनका तला खोद	यही दशा कामनाकी है। उसे बुझाना हो तो सन्तोषरूपी
डाला, रसायनके लिये धातुएँ फूँकी, मोतियोंके लिये	शीतल जल डालिये। धन तो वही असली है, जिससे
समुद्रकी थाह ली, राजाओंको सन्तुष्ट रखनेमें बड़ा यत्न	मनुष्यको सुख मिलता है। ऐसा धन सन्तोष है—
किया, मन्त्रसिद्धिके लिये रातों श्मशान जगाया और	'सन्तोषः परमं धनम्।' ऐसे अनेक करोड़पति देखे
एकाग्र होकर बैठा हुआ जप करता रहा, पर खेद है कि	जाते हैं, जो तृष्णाके फेरमें पड़े हुए असन्तोष और
कहींपर भी एक फूटी कौड़ी हाथ न लगी। इसलिये हे	अतृप्तिकी तीव्र आगसे जल रहे हैं। उनके अन्त:करणमें
तृष्णे! अब तो तू मेरा पिण्ड छोड़। फिर आगे कहते हैं—	क्षणभरके लिये भी शान्ति पैदा नहीं होती। इसलिये
भ्रान्तं देशमनेकदुर्गभवनं प्राप्तं न किञ्चित् फलं	तो वे महान् दुखी रहते हैं—
त्यक्त्वा जातिकुलाभिमानमुचितं सेवा कृता निष्फला।	अशान्तस्य कुतः सुखम्।
भुक्तं मानविवर्जितं परगृहेष्वाशङ्कया काकवत्	न्यायसे धन कमाने और उसका सदुपयोग करनेकी
तृष्णे जृम्भिसि पापकर्मनिरते नाद्यापि संतुष्यसि॥	मनाही नहीं है, परंतु धनकी तृष्णासे मतवाले होनेकी
(वैराग्यशतक ४)	आवश्यकता नहीं। इसीलिये शास्त्रोंमें इसके लिये मर्यादा
भटक्यो देश-बिदेश, तहाँ कछु फलहु न पायो।	बतायी है; क्योंकि धनमें बड़ी मादकता होती
निज कुलको अभिमान छोड़ सेवा चित लायो॥	है, 'धनमद' सबसे बड़ा मद होता है। यह मद जब

भाग ९२ मनुष्यपर चढ़ जाता है तब उसे अन्धा बना देता है। जो आये सो कहे, उसे तो अपने काम-से-काम। फिर वह अपने सामने जगत्में किसीको भी बुद्धिमान् जो जगत्की ओर ताकते हैं वे ही लोगोंकी बातें नहीं समझता। वे पुरुष धन्य हैं जो धन होते हुए सुनते हैं और उन्हें जवाब देनेके लिये ठहरते हैं। भी मदहीन और विनम्र हैं, परंतु ऐसे पुरुष संसारमें जिन्हें पूरी प्यास नहीं होती, वे प्यासकी अधिकतासे विरले ही होते हैं। धनकी स्वाभाविक मादकता आये छटपटाते नहीं दीखते। इसीलिये उन्हें सुनना, ठहरना बिना प्राय: रहती नहीं। अतएव साधक पुरुषोंको चाहिये और जवाब देना सूझता है। जिसके हृदयमें भगवद्दर्शनकी तृष्णा (तीव्र लालसा) बढ़ जाती है, कि वे आजीविकाके लिये उतना ही कार्य करें, जिससे उनका गृहस्थ-जीवन बडी सादगीके साथ साधारणरूपसे वह तो प्रेमोन्मत्त हो जाता है। ठीक चलता रहे। धन बटोरकर भोग भोगने या पुण्य लगी है प्यास जोरोंसे, ढूँढ़ता हूँ सरोवर को। कमानेकी इच्छा रखकर धनके लिये तृष्णा न करे, सुहाता है नहीं कोई, मुझे अब दूसरा कुछ भी॥ इससे परमार्थके साधनमें बड़ा विघ्न होता है। जब भगवान्के लिये इतनी तृष्णा बढ़ती है, तब धन कमाना बुरी बात नहीं है, पर धनकी तृष्णा भगवान्का आसन डोल जाता है, उन्हें आना ही बुरी है। जगत्के किसी भी भोग्यपदार्थकी तृष्णा पड़ता है वैकुण्ठ छोड़कर, उस रूपके प्यासे मतवाले मनुष्यको बन्धनमें डाल देती है। तृष्णा हो तो बस अपने भक्तको अतुल सौन्दर्य-सुधा पिलाकर सदाके एक प्यारे मनमोहनके मुखकमल-दर्शनकी ही हो, लिये तृप्त और सन्तुष्ट कर देनेके लिये। भगवान्के जिससे त्रिविध तापोंका सदाके लिये नाश हो जाता इस मनोहर मिलनसे संसारकी समस्त ज्वालाएँ शान्त है, परंतु वह तृष्णा उन्हीं भाग्यवानोंको प्राप्त होती हो जाती हैं, उनकी जन-मनहर अनोखी वाणी सुनते है, जो भोगोंकी तृष्णाको विषवत् त्याग देते हैं। जो ही अविद्याकी बेड़ियाँ पटापट टूट जाती हैं, कर्मोंका जगत्के केवल देखनेमें रमणीय पदार्थींके असली रूपको बन्धन खुल जाता है। अमावस्याकी घोर निशा पहचानकर उनसे मुँह मोड़ लेते हैं, उन्हींके अन्त:करणमें शरत्पूर्णिमाके अमृतभरे प्रकाशके रूपमें परिणत हो भगवच्चरण-दर्शनकी तीव्र पिपासा उत्पन्न होती है। जाती है। तब धन, मान, कुल, विद्या और वर्णका फिर वे पागल हो उठते हैं, उस रूपमाध्रीका दर्शन सारा अभिमान उस प्रियतमके प्रेमकी बाढमें बह जाता करनेके लिये। उन्हें दूसरी बात सुहाती नहीं। जगत्के है—मायाका लेन-देन चुक जाता है। उसके लिये द्वार खुल जाता है, उस सर्वत्र अबाधित परमात्माके विषयी लोग उन्हें पागल समझते हैं। कोई मूर्ख समझते हैं, कोई निकम्मा समझते हैं; कोई अशक्त परम धामका। उसका कोई भी अपना-पराया नहीं समझते हैं और कोई अविवेकी समझते हैं; परंतु वे रह जाता। उसे तब सर्वत्र ही मोहनकी मधुर मुरलीका अपनी उसी धुनमें इतने मस्त रहते हैं कि निन्दकोंकी सुरीला स्वर सुनायी पड़ने लगता है और कण-कणमें ओर ताकनेकी भी उनको फुरसत नहीं मिलती। प्यासके दीखने लगता है केवल उस एकका ही अपार रूप-मारे जिसके प्राण छटपटाते हों, वह भला जलको विस्तार। ऐसी स्थितिमें वह उसीमें अनुरक्त, उसीमें तृप्त, उसीमें मत्त और उसीमें सन्तुष्ट हो रहता है। छोड़कर दूसरी ओर कैसे ताकेगा? उसे जबतक जल नहीं मिल जायगा, तबतक जगत्की गप्पें कैसे सुहायेंगी? उसके लिये फिर कोई भी अभिलाषा, कोई भी कर्तव्य वह तो दौड़ेगा वहींपर जहाँ उसे जल दीखेगा। वह शेष नहीं रह जाता-क्यों परवा करेगा लोगोंकी जबानकी? जिसके मनमें तस्य कार्यं न विद्यते।

मोह रोगकी चिकित्सा

काकभुशुण्डिजी रामकथा सुनाते हुए नारदके मोहका है। वे वहाँकी एक गुहामें बैठकर ध्यानमें तल्लीन हो

वर्णन करते हैं। मोहको यों समझें कि शरीरमें जितने रोग

होते हैं, उनके मूलमें किसी-न-किसी प्रकारका कुपथ्य होता है। अधिकांशत: व्यक्ति यह जानता है कि मुझे यह

भोजन नहीं करना चाहिये, इस समय ऐसा करनेसे मैं रोगग्रस्त हो जाऊँगा, पर जब व्यक्ति उस ज्ञानका

रागग्रस्त हा जोऊगा, पर जब व्यक्ति उस ज्ञानका अनादरकर उसके प्रतिकूल आचरण करता है तो अस्वस्थ हो जाता है, तो जिस वृत्तिके कारण शरीरमें रोग उत्पन्न

संख्या ११ ]

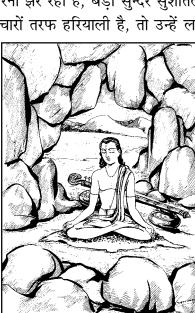
होता है, वह कुपथ्य है। कुपथ्यको जानते हुए भी विपरीत आचरण करनेकी जो वृत्ति है, उसका नाम है मोह। रामायणमें मोहको अज्ञानका प्रतीक या पर्यायवाची नहीं

रामायणम माहका अज्ञानका प्रताक या प्रयायवाचा नहां माना गया है। अज्ञानका अर्थ है न जानना, पर मोहमें ज्ञानके होते हुए भी उसका तिरस्कार करना है। तो मोहको समझनेके लिये नारदजीका प्रसंग लिया गया, क्योंकि

सत्यको समझनेवाला और कौन हो सकता था! हम 'मानस' में पढ़ते हैं कि नारदजी हिमालयकी पहाडियोंमें जाते हैं और जब वहाँका वातावरण देखते

नारदजीसे अधिक जाननेवाला, उनसे अधिक आध्यात्मिक

हैं कि झरना झर रहा है, बड़ी सुन्दर सुशीतल वायु बह रही है, चारों तरफ हरियाली है, तो उन्हें लगता है कि



हा व वहाका एक गुहाम बठकर व्यानम तल्लान हा जाते हैं। इन्द्रको लगता है कि नारद निश्चय ही स्वर्ग

पानेके लिये ही तपस्या कर रहे होंगे। इन्द्रके मनमें भय उत्पन्न होता है कि कहीं ये मेरे स्वर्गपर अधिकार प्राप्त करनेके लिये तो तपस्या नहीं कर रहे हैं।

यहाँपर गोस्वामीजी एक बड़े महत्त्वकी मनोवैज्ञानिक बात बताते हैं। वैसे लगता तो यही है

कि दुर्गुणोंकी ओरसे व्यक्तिके जीवनमें बाधा आती है, लेकिन कभी-कभी ऐसा भी दिखायी देता है कि

ह, लोकन कमा-कमा एसा मा दिखाया दता है कि दुर्गुण और सद्गुण मिलकर साधकके जीवनमें बाधाकी सृष्टि कर रहे हैं। नारदके जीवनमें इसी दूसरे तथ्यकी ओर संकेत किया गया है। नारदकी तपस्याको भंग

सृष्टि कर रह है। नारदक जावनम इसा दूसर तथ्यका ओर संकेत किया गया है। नारदकी तपस्याको भंग करनेकी वृत्ति किसी राक्षस या दैत्यके मनमें नहीं आती, वह आती है इन्द्रके मनमें। और इन्द्र कौन

हैं? सबसे बड़े पुण्यात्मा। सौ अश्वमेधयज्ञ करनेवाला ही इन्द्रका पद प्राप्त करता है। तो, ऐसा इन्द्र जो स्वयं सत्कर्म करनेवाला है, जब दूसरेको सत्कर्मसे

विरत करनेकी चेष्टा करता है, तब यह बात बड़ी अटपटी-सी मालूम पड़ती है। पर यही समाजका सत्य है और जीवनका भी। अच्छे काममें बाधा केवल बुरे लोग ही नहीं डालते, कभी-कभी अच्छे

लोग भी डालते हैं। यह तब होता है, जब उनके मनमें ईर्ष्या उत्पन्न होती है कि कहीं वह मुझसे बढिया काम न कर दे। अच्छा कहलानेवाले ऐसे

ईर्ष्यालु व्यक्ति भोगपरायण होते हैं। इन्द्र कामको बुलाकर कहता है कि तुम अपने सहायकोंसहित जाओ और नारदको ध्यानसे विरत

करनेकी चेष्टा करो। काम अप्सराओंको लेकर नारदके पास जाता

है, पर उनके मनपर अप्सराओंके मोहक हाव-भाव, नृत्य आदिका रंचमात्र भी प्रभाव नहीं पड़ता। वे शान्तभावसे बैठे रहते हैं। यह देख कामके मनमें

यह स्थान भगवान्का ध्यान करनेके लिये बड़ा अनुकूल

भय उत्पन्न होता है कि कहीं मुनि क्रोध करके मुझे कहिये।' कन्या अति सुन्दर थी। नारदजी उसपर भस्म न कर दें। नारद शान्त भावसे कामको देखते हैं। काम डरके मारे उनके चरणोंमें आ गिरता है और कहता है—'महाराज! मैंने जो कुछ किया है, वह इन्द्रके कहनेसे किया है।' कामके कथनका अर्थ यही है कि यदि दण्ड देना हो तो इन्द्रको दीजियेगा,

मोहित हो गये। नारदजीने उसके साथ विवाह करनेकी

योजना बनायी। उसके पश्चात् नारदजीके जीवनमें

सारे दुर्गुण काम, क्रोध, लोभ, मद और मात्सर्य

कर रहे हो कि तुमने कामको जीत लिया। देखो, तुम

तो काममें इतने पागल हो रहे हो, जितना एक गृहस्थ

भी नहीं होता। गृहस्थ कामी भी बनता है तो सुबह उठकर पूजा-पाठ तो कर ही लेता है, पर नारदकी दशा

भगवान्ने मानो बता दिया कि नारद! तुम वृथा गर्व

[भाग ९२

मुझे नहीं। यही व्यक्तिके जीवनकी विडम्बना है कि अभीतक तो काम इन्द्रका सहयोगी बना हुआ था, और जब अपने उद्यममें असफल हो गया, तब कहता है मैंने यह अपनी इच्छासे नहीं किया है। फिर भी नारदको क्रोध नहीं आया और उन्होंने मुसकराकर कामसे कहा-'तुम इन्द्रसे जाकर कह देना कि मेरे अन्त:करणमें स्वर्गका कोई लोभ नहीं है, वह आनन्दसे स्वर्गके भोगोंका भोग करे।' काम नारदके चरणोंमें प्रणाम करके चला गया। लेकिन एक विचित्र बात हो गयी। अभी नारदके जीवनमें सद्विचारोंकी-

पहचान नहीं कर पाते हैं। यही नारदकी समस्या है। रोग कब होता है, जब रोगी कुपथ्य करता है। नारदने सारी इन्द्रियोंसे तो कुपथ्य रोक दिया, पर एक इन्द्रियसे कुपथ्य हो गया। भगवान् नारदके इस अहंकारके आधारको ही

सत्कर्मोंकी साधनाकी इतनी बढ़िया खेती हुई थी, पर

अब उसके बगलमें अहंकारकी घास उग आयी और

नारद उस घासको अनदेखा कर देते हैं, घासकी

भगवान्ने एक कौतुक किया। भगवान्ने अपनी मायाको प्रेरित किया। भगवान्की वह माया वैकुण्ठसे भी अधिक सुन्दर विचित्र नगरकी सृष्टि करती है। नारदको वह नगर बड़ा आकर्षक प्रतीत होता

और अपनी कन्याको बुलवाया। कन्याका नाम है

विश्वमोहिनी। राजा नारदजीसे कहते हैं-'हे नाथ!

नष्ट कर देना चाहते हैं। इसे प्रत्यक्ष करानेके लिये

है और वे उसे देखनेके लिये आगे बढ़ जाते हैं। नगरके राजा शीलनिधिने आकर उन्हें प्रणाम किया

<del>ार्</del>णा विमां के तह के कि प्रतिकार पहिन्ती के कि कि प्रतिकार के क

भगवानुसे प्रार्थना की-

दिखायी देने लगे।

ऐसी हो गयी है कि कहते हैं-कछ न होइ

तेहि बिधि बिधि मिलइ कवन इस समय जप-तपसे तो कुछ हो नहीं सकता, इस

समय तो सुन्दर रूपकी आवश्यकता है, जिसे देखकर राजकुमारी मुझपर रीझ जाय और मेरे गलेमें वरमाला डाल दे। उस समय नारदजीने भगवान्से प्रार्थना की कि

बाला॥

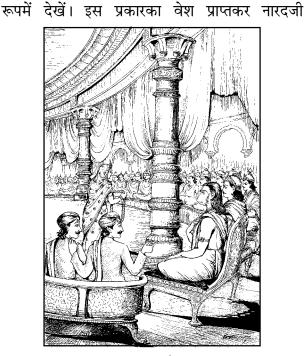
प्रभो! आप अपना रूप मुझे दे दीजिये, और किसी प्रकारसे मैं उस राजकन्याको नहीं पा सकता। उन्होंने जेहि बिधि होइहि परम हित नारद सुनहु तुम्हार। छूटकर गिर गयी हो। उन्हें इस तरह व्याकुल देखकर सोइ हम करब न आन कछु बचन न मृषा हमार॥ शिवगणोंने मुसकराकर कहा—जाकर दर्पणमें अपना मुँह मायाके वशीभूत नारद भगवान्के कथनको समझ तो देखिये! एसा कहकर वे दोनों तो भाग लिये, पर नारदजीने जब

मोह रोगकी चिकित्सा

रत रहती है। भगवान्ने उनके कल्याणके लिये उनकी मुखाकृति हरि (बन्दर)-के जैसी बना दी थी; परंतु उनका अपमान न हो, इसलिये यह भी व्यवस्था कर दी थी कि वह रूप केवल उस मायामयी राजकन्याको ही दिखायी दे, अन्य सब लोग उन्हें नारदके ही

भगवान्ने भी श्लेषात्मक शब्दोंमें आश्वासन दिया।

संख्या ११]



स्वयंवर-सभामें आते हैं। वहाँ दो रुद्रगण भी हैं, जो उनके ही पास बैठते हैं। उनको भी भगवान्की आगेकी लीलामें पात्र बनना है, अत: उन्हें भी नारदजीका मर्कटरूप दिखायी देता है, वे दोनों नारदजीपर व्यंग्य

भी करते हैं, परंतु मायाके वशवर्ती नारदजी उसे

समझ नहीं पाते हैं। स्वयंवर-सभामें राजकन्या जयमाल लेकर आती है, नारदजीका भयंकर रूप देखकर वह

दूरसे ही चली जाती है। उसी समय भगवान् भी

उधर नृपवेशधारी भगवान्के गलेमें वरमाला पड़ते ही

राजाके वेशमें आते हैं और राजकन्या प्रसन्न मनसे उनके गलेमें वरमाला डाल देती है।

कुछ सुना दिया। उन्हें शापतक दे डाला। नारदको बड़ा गर्व था कि मुझे इन्द्र और कामपर क्रोध नहीं आया। पर भगवान्ने उन्हें दिखा दिया कि तुम कितने

नहा आया। पर भगवान्न उन्हादखा। दया। क तुम कितन गर्वीले हो। अरे! तुम तो मुझपर क्रोध कर रहे हो, मुझे गाली दे रहे हो, मुझे शाप दे रहे हो। तुम्हारा सारा अभिमान व्यर्थ

है। नारद जब इस सत्यको समझ लेते हैं, भगवान् उनके

उस राजकन्या और लक्ष्मीजीके साथ रास्तेमें ही मिल गये।
मुनिको देखकर भगवान्ने स्वयं कहा—हे मुनि! व्याकुलकी
तरह कहाँ चले?
भगवान्के ये शब्द सुनते ही नारदजीके क्रोधका
पारावार न रहा और उन्होंने कथ्य-अकथ्य भगवान्को सब

भगवान् कमलापितके पास चल दिये। क्रोधके आवेशमें उन्होंने यह निश्चय कर लिया कि या तो मैं उन्हें शाप दूँगा या प्राण दे दूँगा। नारदजी थोड़ी ही दूर गये थे कि भगवान् उस राजकन्या और लक्ष्मीजीके साथ रास्तेमें ही मिल गये। मुनिको देखकर भगवान्ने स्वयं कहा—हे मुनि! व्याकुलकी

और उन्होंने उन शिवगणोंको राक्षस होनेका शाप दे दिया। उसके बाद भी उनका क्रोध शान्त न हुआ और वे भगवान् कमलापतिके पास चल दिये। क्रोधके आवेशमें

जलमें अपने मुखका प्रतिबिम्ब देखा तो उन्हें बड़ा क्रोध आया

नारदजी ऐसे व्याकुल हो जाते हैं, मानो गाँठमें बँधी हुई मणि

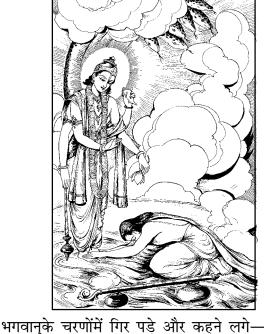
जबतक माया थी, तबतक भगवान्से झगड रहे थे। जब मायाका लोप हो गया, मोह दूर हो गया, तो

अलग-अलग विकारोंको दूर करनेके बदले विकारोंके मुलमें

जब हरि माया दूरि निवारी। नहिं तहँ रमा न राजकुमारी॥

जो मोहकी वृत्ति विद्यमान है, उसीको दूर कर देते हैं—

और जब विश्वमोहिनी नहीं रही—



'मुषा होउ मम श्राप कृपाला।' मैं दुर्बचन कहे बहुतेरे। कह मुनि पाप मिटिहिं किमि मेरे'॥

महाराज! मेरा पाप कैसे मिटे, यह बताइये। मुझसे जो दोष हुआ है, उसका प्रायश्चित्त क्या है? भगवान्ने

मुसकराकर कहा—'जपहु जाइ संकर सत नामा।'

विष्णुभगवान् अति विशेष कृपा करके जब नारदजीके सामनेसे अपनी मायाका लोप कर देते हैं. तभी नारदजीका

मोह नष्ट होता है। मोहके कारण ही नारदजी अन्य

दुर्गुणोंरूपी रोगसे ग्रस्त हो गये थे। हमारे जीवनमें भी जितने दुर्गुण हैं, सब भगवान्की मायाके कारण ही हैं।

माया छायाके जैसी है। छाया दिखती है, छायाको कोई पकड़ नहीं सकता। जो दीपके सम्मुख है, उसको छाया नहीं दिखती—उसके पीछे छाया रहती है। जो

दीपकके सामने पीठ करता है, तब छाया आती है। जो

सबसे बडा पाप कौन-सा है। शास्त्रोंमें लिखा

भगवान्को भूल जाय यही बड़ा पाप है।

भगवानुके सम्मुख है, माया उसे नहीं दिखती है।

पाप कैसे मिटे, यह बताइये? मुझसे जो पाप हुआ है,

है-ब्रह्महत्या महापाप है। ब्रह्मको मारनेमें 'ब्रह्म हत्या' होती है-अरे, ब्रह्मको कौन मार सकता है ? ब्रह्महत्याका अर्थ है—ब्रह्म-विस्मरण। जो भगवान्को भूल जाता है,

उसके आगे माया आती है। भगवान्को भूलना नहीं। नारदजी विष्णुभगवान्से पूछते हैं—'महाराज! मेरा

उसका प्रायश्चित्त क्या है?' भगवान् बताते हैं कि तुम भगवान् शंकरके नामका जप करो। वैसे पाप छोड़ना बड़ा ही कठिन है। पाप प्राय: सभी लोग करते हैं। भगवान्के नामका जप करनेसे ही पाप छूटता है। भगवान् हृदयमें प्रकट हों और जिसको पाप करनेसे ही

रोक लें, उसीका पाप छूटता है। हनुमान्जीने कभी पाप किया ही नहीं। इसका एक ही कारण है—'श्रीहनुमान्जी महाराज सतत रामनामका जप करते हैं।' जपसे ही जीवन सुधरता है। आप बहुत दान दो,

बढ़ता है। यज्ञ करनेसे, तीर्थयात्रा करनेसे पुण्य बढ़ेगा। पुण्य बढता है, तब पुण्यका अभिमान बढ़ता है। किंतु किये हुए पाप नष्ट नहीं होते। लोग दान देते हैं, यज्ञ करते हैं नाना प्रकारके पुण्य करते हैं। अच्छा है। सबसे

उससे बिगड़ा हुआ मन शुद्ध नहीं होगा। दान देनेसे पुण्य

उत्तम तो यह है कि घरमें शान्तिसे बैठकर भगवान्के नामका जप करो। भगवानको भूलो नहीं। गोस्वामीजी इस प्रसंगका नाम 'नारद-मोह' देते हैं।

यह सार्थक नाम है। इसका तात्पर्य यह है कि दुर्गुणोंके बीज व्यक्तिके अन्त:करणमें विद्यमान रहते हैं, और समय पाकर वे अंकुरित हो उठते हैं। रामायणमें यह दावा किया गया है कि बड़े-से-बड़ा व्यक्ति भी इसका अपवाद नहीं है, ऐसा

कोई नहीं, जो कह सके कि उसके अन्त:करणमें दुर्गुणोंके संस्कार नहीं हैं। यदि कोई ऐसा कहता है, तो वह अपने जाने हुए सत्यका तिरस्कार करता है और फलस्वरूप मन

तथा शरीरकी दृष्टिसे अस्वस्थ हो उठता है।

[ प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता ]

संसारसे निराशा, भगवान्की आशा संख्या ११ ] साधकोंके प्रति— संसारसे निराशा, भगवान्की आशा ( ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज ) शरीरतक ही जा सकते हैं, हमतक नहीं। पर हमको आस्तिक लोग इस बातको दुढतापूर्वक मानते हैं तो परमात्मा प्राप्त हो ही सकते हैं। वे परमात्मा कि परमात्मा सभी देश, काल एवं वस्तुओंमें परिपूर्ण हैं, व्याप्त हैं। ऐसी कोई जगह नहीं है, जहाँपर वे सभी प्राणियोंके सुहृद् हैं एवं उन्होंने सभीको अपना न हों। वे सभी देशमें हैं, अत: जहाँपर आप हैं, आश्रय प्रदान कर रखा है। केवल इसे स्वीकार वहाँपर भी हैं, वे सभी समयमें हैं, अत: अब भी हैं, करनेकी उत्कट इच्छा होनी चाहिये। यह इच्छा पहले एवं सभी वस्तुओं-व्यक्तियोंमें हैं, अत: आपमें भी हमको अर्थात् जीवको ही करनी पड़ेगी; क्योंकि जीव हैं। इस मान्यतामें किसी प्रकारका कोई सन्देह नहीं ही परमात्मासे विमुख हुआ है, परमात्मा तो कभी हो सकता है। सभी वेद, पुराण, संत, महात्मा इसका दुर हुए ही नहीं। पुरी तरहसे समर्थन करते हैं। वे परमात्मा सभी काल परिवर्तनशील एवं नाशवान्का सद्पयोग किया जा सकता है, भरोसा नहीं। जो एक क्षण भी एवं अवस्थाओंमें हैं-ज्यों-के-त्यों हैं, उनमें कोई स्थिर नहीं टिकता, उसपर कैसे विश्वास किया जाय? परिवर्तन नहीं होता है। जो संसार हमारे देखने, सुनने एवं समझनेमें परमात्मा भूतकालमें थे, वर्तमानमें हैं एवं भविष्यमें आता है, वह सब-का-सब परिवर्तनशील है। यह भी रहेंगे ही, अत: उन्हींको अपना आधार मानकर एक क्षण भी स्थिर नहीं रहता, बदलता ही रहता स्वयंको उनकी सेवामें समर्पित कर देना चाहिये। हाँ, है। यदि आज हम अपने बचपनके रूपको देखना शरीर संसारका है, अत: इसे संसारकी सेवामें लगा चाहें तो नहीं देख सकते; क्योंकि वह रूप सर्वथा देना चाहिये। बदल गया है। इसी प्रकार यह वर्तमान रूप भी नहीं स्वयंको परमात्माकी सेवामें अर्पित कर देनेसे रहेगा, इसमें भी परिवर्तन हो रहा है। अन्य जितने साधक कृतकृत्य, प्राप्त-प्राप्तव्य एवं ज्ञात-ज्ञातव्य हो भी प्राकृतिक पदार्थ हैं, वे भी हर क्षण बदल रहे जाता है। फिर उसे कुछ भी करना, पाना एवं जानना हैं। दृश्यमात्र प्रतिक्षण अदृश्यताको प्राप्त हो रहा है। शेष नहीं रहता। किंतु संसारकी आशा रखनेसे सिवा यदि हम गम्भीरतासे विचार करें तो प्रतीत होगा कि धोखे एवं विश्वासघातके और कुछ भी हाथ नहीं इनमें केवल नाश ही नाश है, नाशके अतिरिक्त अन्य लगता। प्रत्येक व्यक्तिका आजतकका अनुभव यही कोई वस्तु ही नहीं है। अत: बुद्धिमत्ता इसीमें है कि बतलाता है। इतने वर्ष हो गये संसारका आश्रय लेते नाशवान्, परिवर्तनशील संसारका आश्रय न लेकर सर्वत्र हुए, पर इससे कौन-सी प्राप्ति हुई? लेनेकी इच्छासे जहाँपर भी हाथ डाला, वहीं दु:ख, निराशा एवं परिपूर्ण परमात्माका ही आश्रय लें; क्योंकि जो प्रतिक्षण बह रहा है, नाशको प्राप्त हो रहा है, उसके आश्रयसे अभाव ही हाथ लगे। वस्तुत: संसार सभी दृष्टि-कौन-सा लाभ प्राप्त हो सकता है? कोणोंसे अपूर्ण है। अपूर्णसे पूर्णताकी प्राप्ति कैसे हो प्रतिक्षण बदलनेवाला एवं बहनेवाला संसार हमारा सकती है? नहीं है, किंतु प्रत्येक अवस्थामें सम रहनेवाले परमात्मा संसारमें धन-सम्पत्ति, पद-अधिकार एवं मान-हमारे हैं। संसार एवं शरीर एक जातिके हैं तथा बडाई प्राप्त करनेकी इच्छा करना एक बहुत बड़ा प्रमाद एवं बहुत बड़ी भूल है। गम्भीरतासे सोचना परमात्मा एवं हम एक जातिके हैं। संसार-शरीर प्रकृतिके चाहिये कि क्या ये चीजें रहेंगी? जो पहले नहीं थीं, अंश हैं तथा हम परमात्माके अंश हैं। अंश अंशीको वे आगे भी नहीं रहेंगी—उनकी प्राप्तिसे क्या हम ही प्राप्त होना चाहिये। संसार एवं सांसारिक पदार्थ

भाग ९२

वस्तुतः परमात्मा हेतुरहित दयालु एवं सभी

प्राणियोंके परमप्रिय मित्र हैं। जो मनुष्य इनका आश्रय ग्रहण कर लेते हैं, उनको ये प्राणाधिक प्रिय मानते

हैं। भगवान्की मान्यता है—'**मैं भगतनको दास,** 

भगत मेरे मुक्टमिण।' भागवतमें भगवान्ने कहा है

कि मैं भक्तोंके पीछे इसलिये फिरा करता हूँ कि उनके चरणोंकी धूलि मेरे ऊपर पड़ जाय तो मैं

पवित्र हो जाऊँ—'अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूर्ययेत्यङ्-

महत्त्व देते हैं। ऐसे कृपालु परमात्माका आश्रय ग्रहण

न कर संसारका भरोसा रखना बहुत बड़ी कृतघ्नता

एवं आत्मघात है। कृतघ्नता पाप है, आत्मघात महापाप

परवाह न कर भगवान् सभीका समानरूपसे पालन-

पोषण करते हैं। जो भगवानुका खण्डन करते हैं, उनका विरोध करते हैं, उनके लिये भी भगवान्के द्वारा निर्मित सभी वस्तुएँ—धरती, अन्न, जल, वायु, आकाश इत्यादि समानरूपसे उपलब्ध होती हैं। ऐसे परम सुहृद् परमात्माका आश्रय ग्रहणकर जीवनको सफल बना लेना चाहिये। सांसारिक पदार्थींके लिये परमात्माका आश्रय ग्रहण करना कोई विशेष महत्त्वकी बात नहीं है। यद्यपि न करनेकी अपेक्षा यह भी

कोई भजता है या नहीं - इसकी किंचिन्मात्र भी

है। इनसे बचना चाहिये।

करता है। जो पदार्थ इसके सामने उत्पन्न होते **घ्रिरेण्भि:।**' (श्रीमद्भा० ११। १४। १६) यहाँ ध्यान तथा नष्ट हो जाते हैं, उनकी प्राप्तिसे वह कैसे बड़ा देनेकी बात है कि भगवान् अपने भक्तोंको कितना

पदार्थोंका दूसरोंकी सेवामें सदुपयोग करना चाहिये, न कि इनपर अधिकार। वस्तुत: धनादि पदार्थ संसारसे ही मिले हैं; अत: संसारका ही इनपर अधिकार है।

निहाल होंगे? यह तो 'नहीं'-तत्त्व है। क्या 'नहीं' कभी मिलता है? केवल भ्रम हो जाता है कि मुझे

अमुक पदार्थ मिल गया, किंतु वास्तवमें मिलता कुछ

भी नहीं; केवल धोखा मिलता है। फिर जो संसार प्रतिक्षण ही बह रहा है, वह कैसे पकड़में आ

यह बड़े ही दु:खकी बात है कि मनुष्य आने-

जानेवाले, नाशवान् पदार्थोंसे अपना मूल्यांकन

हो सकता है? धन, विद्या, पद, अधिकार आदि

सभी नाशवान् हैं, किंतु जीव स्वयं अविनाशी है।

अविनाशी नाशवान्की ओर ललचायी दृष्टिसे देखे-

यह बहुत ही हास्यास्पद स्थिति है। मनुष्यको इन

सकता है?

ठीक है, किंतु आत्मोद्धारके लिये परमात्माका आश्रय ग्रहण करना ही वास्तविक मनुष्य-उद्देश्यता है। जो लोग सांसारिक पदार्थींके लिये दुखी रहते हैं, भगवान् उनके दु:खकी विशेष परवाह नहीं करते। किंतु जो भगवान्के लिये दुखी हो जाते हैं, उनके दु:खको भगवान् सहन नहीं कर सकते। अतः वे शीघ्र ही इनके आने-जानेसे स्वयंपर कोई प्रभाव भी नहीं भगवानुको प्राप्त कर लेते हैं। यही जीवनका चरम

पड़ना चाहिये। लक्ष्य है। भद्रं नो अपि वातय मनो दक्षमुत क्रतुम्। (ऋग्वेद १०।२५।१)

Hinह्येजस्मेन्छांडहरात्यक्रहोर्ग्ल्यमाम्नाह्यःम्बस्टाञ्कुत्यमस्माहक।वात्राक्षेत्रप्रमाममास्य क्रिक्टमेन्छम्दाक्रजन्त्रे sh/Sh

'अब, होउ राम अनुकूला' संख्या ११ ] 'अब, होउ राम अनुकूला' ( प्रो० श्रीबालकृष्णजी कुमावत ) हिन्दी साहित्यके मूर्धन्य विद्वान् आचार्य रामचन्द्र गोस्वामीजीने पद-क्रमांक ४१में श्रीसीताजीकी स्तुतिमें शुक्लने लिखा है—'भक्ति-रसका पूर्ण परिपाक जैसा कहा है, **'कबहँक अंब अवसर पाइ। मेरिओ सृधि** विनय-पत्रिकामें देखा जाता है, वैसा अन्यत्र नहीं। **द्याइबी, कछू करुन-कथा चलाइ॥**' निश्चित ही भक्तिमें प्रेमके अतिरिक्त आलम्बन और अपने दैन्यका श्रीजनकनन्दिनीजीने श्रीरघुनाथजीसे चर्चा चलायी होगी। अनुभव परमावश्यक अंग है। तुलसीके हृदयसे इन दोनों बस, फिर क्या, अनाथ तुलसीकी रची 'विनय-पत्रिका' पर श्रीरघुनाथजी ने 'सही' कर दी। अनुभवोंके ऐसे निर्मल शब्द-स्रोत निकले हैं, जिनमें अवगाहन करनेसे मनकी मैल कटती है और अत्यन्त वस्तुत: गोस्वामीजी भी यही चाहते थे कि पवित्र प्रफुल्लता आती है। प्रत्येक ग्रन्थकी रचनाका श्रीराघवेन्द्रसरकार पहले इस 'विनय-पत्रिका' पर अपनी कुछ-न-कुछ प्रयोजन होता है। इस ग्रन्थके नामसे तो 'सही' कर दें। फिर पीछे पंचोंसे भले ही पूछ लें। यदि पहले ही पंचोंसे सलाह ली तो शायद वे यह कह दें यही प्रतीत होता है कि गोस्वामी तुलसीदासजीने अपना दु:ख निवेदन करनेके लिये श्रीराघवेन्द्रसरकारको यह कि 'पत्रिका' का मजमून बिगड़ गया है, यह राजदरबारके आपबीती पत्रिका लिखी है। सामने न पहुँच सकनेके योग्य नहीं है, तो मेरा सारा किया-कराया मिट्टीमें मिल कारण यह चिट्ठी दरबारमें दूसरोंसे पेश करायी है। जायगा। यथा— दु:ख देनेवाला कलिदेव था। जब कलिके मारे गोसाईंजीके 'बिनय-पत्रिका' दीन की, बापू! आप ही बाँचो। नाकों दम आ गया, तब उन्हें राघवेन्द्रसरकारके दरबारमें हिये हेरि तुलसी लिखी, सो सुभाय सही करि बहुरि पूँछिये पाँचो॥ पत्रिका भेजनी पड़ी। २७६ पदतक पत्रिका लिखी गयी (१७७।३) सुप्रसिद्ध टीकाकार भक्तवर श्रीबैजनाथजीने विनयकी है। पत्रिका पूरी हो चुकी तो प्रश्न उठा—इसे पेश कैसे करें ? फिर हनुमान्जी, शत्रुघ्नजी, लक्ष्मणजी और भरतजीसे सात भूमिकाएँ मानी हैं, जिनके अन्तर्गत प्राय: विनय-प्रार्थना की गयी। सेवक बननेका किसीको साहस न सम्बन्धी सभी प्रकारके पद आ जाते हैं— **१. दीनता**—कैसे देउँ नाथिहं खोरि। (पद १५८) हुआ। सभी एक-दूसरेके मुँहकी ओर ताकने लगे। परंतु लक्ष्मणजी सबमें दृढ़ थे। उनपर राघवेन्द्रसरकारका २. मानमर्षता — काहे ते हिर मोहिं बिसार्यो। (पद अपरिमित वात्सल्य-प्रेम था। उन्होंने ही पत्रिका पेश 98) की। ग्रन्थ यहीं समाप्त होता है। श्रीहनुमान्जी और **३. भयदर्शना**— राम कहत चलु। (पद १८९) **४. भर्त्सना**—ऐसी मूढ़ता या मनकी। (पद ९०) भरतजीकी रुचि देखकर लक्ष्मणजीने श्रीरामचन्द्रजीसे कहा—'हे नाथ! कलियगमें भी आपके एक सेवककी **५. आश्वासन**— ऐसे राम दीन-हितकारी। (पद आपके नामसे प्रीति और प्रतीति निभ गयी।' देखिये, १६६) **६. मनोराज्य**—कबहुँक हों यहि रहिन रहोंगो। (पद उसकी यह 'विनय-पत्रिका' भी आयी है। यह सुनकर सारी राजसभा एक स्वरसे कह उठी, हाँ यह सच है, १७२) लोग भी उसकी रीतिको जानते हैं। गरीबनवाज ७. विचारणा - केसव! किह न जाइ का किहये। श्रीरामचन्द्रजीकी उसपर भारी कृपा है। स्वामीने सबके (पद १११) देखते-देखते उसकी बाँह पकड़कर अपना लिया है। इस प्रकार किसी पदमें स्वामीका प्रभुत्व तो किसीमें सौहार्द और किसीमें औदार्य एवं शीलकी अभिव्यक्ति सबकी बात सुनकर श्रीरघुनाथजीने मुसकराकर कहा-'हाँ, यह सत्य है। मुझे भी उसकी खबर मिल गयी है।' है। किसी पदमें जीवका असामर्थ्य, किसीमें आत्मग्लानि

भाग ९२ और किसीमें मनोराज्य दर्शाया गया है। किसी पदमें यदि तू राम-राम जपता चला जायगा, तो मायाजन्य अपनी रामकहानी सुनायी गयी है तो किसीमें अत्याचार-विषयरूपी शत्रु तुझे बेगारमें न पकड़ सकेंगे; क्योंकि पीडित मानव-समाजका प्रतिनिधित्व किया गया है। रामके दासपर उनकी माया नहीं चलती। यहाँ 'राम हम प्रस्तृत आलेखमें भयदर्शना भूमिकापर विमर्श कहत चल्'शब्द तीन बार आया है। सम्भवत: जीवके करेंगे। पद-क्रमांक १८९में राग गौरीमें गोस्वामीजीने त्रिविध दु:ख-दैहिक, दैविक और भौतिक दूर करनेके लिये तीन बार लिखा गया है। शरीररूपी डोलेकी असारता तथा आत्मानुभूतिके मार्गमें आनेवाली बाधाओंका वर्णन करते हुए संसार-भयको दूर पदकी अगली पंक्तियोंमें शरीरको तिकोने खटोलेकी करनेके लिये श्रीराघवेन्द्रसरकारसे प्रार्थना की है। गृढ संज्ञा दी गयी है। गोस्वामीजी कहते हैं—'हमारे कृटिल दर्शनकी सरलतम ढंगसे विवेचना की गयी है, ताकि इतना मन्द कर्मचन्दने बिना ही मोलका ऐसा निकम्मा डोला ऊँचा दार्शनिक सिद्धान्त सर्वसाधारणके हृदयमें बैठ जाय। मत्थे मढ़ दिया है, जिसमें कि बाँस पुराना लगा है, बेतरतीब है, अट-पट साज लगे हुए हैं, जो सड़ा हुआ राम कहत चलु, राम कहत चलु, राम कहत चलु भाई रे। है और तिकोना है। अर्थात् शरीर तिकोने खटोले-जैसा नाहिं तौ भव-बेगारि महँ परिहौ, छूटत अति कठिनाई रे॥ १॥ है। यहाँ कर्म बढ़ई है, उसने हमें शरीररूपी डोला बाँस पुरान साज सब अठकठ, सरल तिकोन खटोला रे। बनाकर मुफ्त दे दिया है। हमारी तो इसे लेनेकी भी हमहिं दिहल करि कुटिल करमचँद मंद मोल बिनु डोला रे॥ २॥ इच्छा नहीं थी। अनेक जन्म-जन्मान्तरसे जो विषय-बिषम कहार मार-मद-माते चलिहं न पाउँ बटोरा रे। मंद बिलंद अभेरा दलकन पाइय दुख झकझोरा रे॥३॥ प्रवृत्ति चली आ रही है, वही उसमें पुराना बाँस है। प्रकृति, महत्तत्त्व और अहंकार-ये तीन पाटियाँ तथा काँट कुराय लपेटन लोटन ठावहिं ठाउँ बझाऊ रे। सत्त्व, रज और तमोगुण ये तीन पाये हैं। यही इसमें जस-जस चलिय दूरि तस-तस निज बास न भेंट लगाऊ रे॥ ४॥ अटपट साज लगे हैं। वस्तुत: इसकी सारी सामग्री ज्ञान-मारग अगम, संग निहं संबल, नाउँ गाउँकर भूला रे। दृष्टिसे क्षणभंगुर है। इसीसे इसे सड़ा कहा गया है। तुलसिदास भवत्रास हरहु अब, होउ राम अनुकूला रे॥५॥ गोस्वामीजी इस तथ्यको रेखांकित करते हैं कि अरे जाग्रति, स्वप्न और सुषुप्ति—ये तीन अवस्थाएँ हैं, ये ही भाई! राम-राम, कहते चलो, नहीं तो कहीं संसारकी खटोलेके तीन कोने हैं। अज्ञानियोंके लिये तो यह डोला बेगारमें पड़ गये, तो छूटना बड़ा कठिन हो जायगा; ही है। वे इसी शरीरको सर्वस्व मानकर विषय-क्योंकि न तो कभी संसारका अन्त होगा और न तेरी वासनाओंमें आकण्ठ डूबे हुए सुख मान रहे हैं। ज्ञानियोंकी दृष्टिमें यह मन्द डोला है, यह स्वयं उनके प्रवृत्तियोंका ही। श्रीरामचरितमानसेके उपसंहारमें गोसाईंजीने इसी लिये भाररूप हो रहा है-जन्म-मरणका कारण बन रहा है। इस शरीररूपी डोलेके सम्बन्धमें स्व० रामेश्वरजी तथ्यकी चर्चा की है-सुनहु तात यह अकथ कहानी । समुझत बनइ न जाइ बखानी॥ भट्टने एक छप्पय लिखा है, जो इन्द्रियोंके वैषम्य तथा ईस्वर अंस जीव अबिनासी । चेतन अमल सहज सुखरासी॥ खींचतानको चित्रित करता है-सो मायाबस भयउ गोसाईं। बँध्यो कीर मरकट की नाईं॥ कान निरन्तर गान-तान सुनिबो ही चाहत। जड़ चेतनिह ग्रंथि परि गई । जदिप मृषा छूटत कठिनई॥ आँखें चाहति रूप रैन-दिन रहति सराहत॥ तब ते जीव भयउ संसारी । छूट न ग्रंथि न होइ सुखारी॥ नासा अतर-सुगन्ध चहति फूलन की माला। श्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई । छूट न अधिक अधिक अरुझाई॥ त्वचा चहति सुख-सेज संग कोमलतन बाला॥ रसना हूँ चाहति रहति नित खाटे, मीठे चरपरे। (रा०च०मा० ७। ११७। १–६) जन्म-मरणका चक्र सदा चलता ही रहेगा। हाँ, इन पंचन इहि सरपंच सों भूपन को भिच्छुक करे॥

'अब, होउ राम अनुकूला' संख्या ११ ] मिलता, जिसके साथ जैसे-तैसे वहाँतक पहुँच सकें। शरीररूपी डोलेके सम्बन्धमें आगे गोसाईंजी विस्तार देते हुए निरूपित करते हैं कि इसको उठानेवाले कहार रास्ता बहुत दुर्गम है, साथमें राह-खर्च भी नहीं है, अर्थात ऐसे सत्कर्म भी नहीं किये हैं, जिनके भरोसे रास्ता विषम हैं। अर्थात् दो, चार या आठ कहार डोला उठाया तय कर लिया जाय। जहाँ जाना है, उस गाँवका नामतक करते हैं, पर इस शरीररूपी डोलेको उठानेवाले कहार पाँच हैं—जिह्वा, नेत्र, नासिका, श्रवण और त्वचा अथवा इनके याद नहीं। कहीं जैसे-तैसे चलते-चलते किसी दूसरे ही गाँवमें पहुँच जायँ तो बड़ी मुश्किल हो जाय। विषय—रस, रूप, गन्ध, शब्द और स्पर्श। ये कहार मतवाली मदिरा पीकर मतवाले हो रहे हैं, इसलिये एक-से श्रीरामचरितमानसमें प्रकारान्तरसे इसी बातको पैर रखते हुए नहीं चलते। कोई किधर पैर रखता है तो गोसाईंजीने निम्नांकित दोहेमें व्यक्त किया है-कोई किधर। नेत्र अपने विषयकी ओर दौडते हैं, तो कान जे श्रद्धा संबल रहित नहिं संतन्ह कर साथ। अपने विषयकी ओर, नाक किधरको भागती है, तो जीभ तिन्ह कहुँ मानस अगम अति जिन्हहि न प्रिय रघुनाथ॥ किसी और ही तरफ। इस मनमानी-घरजानी चाल (रा०च०मा० १। ३८) चलनेसे डोला कबतक चल सकेगा और कहाँ ले जाकर अर्थात् जिनके पास श्रद्धारूपी राह-खर्च नहीं है पटक देगा? कभी नीचेकी ओर, कभी ऊँचेकी ओर और संतोंका साथ नहीं है तथा जिनको रघुनाथजी प्रिय चलनेसे धक्के और झटके लग रहे हैं, और इस नहीं हैं, उनके लिये यह मानस अत्यन्त ही अगम है खींचतानमें भारी कष्ट हो रहा है, अर्थात् इन्द्रियाँ कभी अर्थात् श्रद्धा, सत्संग और भगवानुके प्रति प्रेमके बिना बुरी वासनाओंकी ओर दौड़ती हैं, और कभी सद्वासनाओंकी कोई इसको पा नहीं सकता। पदके अन्तमें गोसाईंजी इसीलिये प्रार्थना करते हैं कि हे श्रीरामजी! इस ओर, किंतु मनके संकल्प-विकल्पके कारण पूरा कुछ भी नहीं पड़ता। जीव बेचारा बीचमें व्यर्थ ही धक्का खा रहा तुलसीदासके (जन्म-मरणरूपी) संसार-भयको आप ही है। इस ऐंचाखैंचीमें पडकर रो-रोकर दिन बिता रहा है। कृपाकर दूर कीजिये। उनका यह दुढ विश्वास भी है कि जीवन-यात्राके रास्तेमें काँटे बिछे हैं, कंकड़ पड़े राम-नामके ही प्रतापसे यह सम्भव है। हैं, साँपिनकी भाँति लपटनेवाली बेलें लिपट जाती हैं। कवितावलीमें इस सम्बन्धमें वे लिखते हैं कि राम-कदम-कदमपर उलझनें हैं, अर्थात् शरीर-यात्राके मार्गमें नाम अजामिल-जैसे खलोंको भी तारनेवाला है, गज और अनेक बाधाएँ उपस्थित हैं—मोह-ममता कंकड़ हैं, गणिकाका भी निस्तार करनेवाला है। नामने ही प्रह्लादके विषैले विषय बेलें है तथा कर्मींकी विकट झंझट ही विषादका नाश किया और उनके पिता (हिरण्यकशिप्)-उलझन है। इन सब कारणोंसे पग-पगपर रुक जाना से होनेवाले भय और साँसतरूपी समुद्रको सुखा दिया। पड़ता है। शरीर-यात्रा निर्विघ्न हो नहीं सकती। जैसे-रामनाममें जिसकी प्रीति और प्रतीति नहीं है, उसको कराल-जैसे आगे बढ़ते जाते हैं, वैसे-वैसे गंतव्य स्थान दूर होता कलिकाल निगल जानेमें कभी नहीं चुका अर्थात् निगल चला जा रहा है। आध्यात्मिक भाषामें यह कहा जा ही गया। जिसके हृदयमें 'रा' और 'म' इन दो अक्षरोंका सकता है कि आत्मानुभूतिके लिये जो-जो उपाय करते बल हुलसता है, उसकी रक्षा श्रीरामजी करते हैं। हैं, माया बीचमें पड़कर सारे किये-करायेपर पानी फेर नामु अजामिल-से खल तारन तारन, बारन-बार बधूको। देती है। चाहते हैं कि ब्रह्मानन्दका पीयूष पान करें, पर नाम हरे प्रहलाद-बिषाद, पिता-भय-साँसतिसागरु सूको।। मिलता है विषय-सुखोंका विषभरा प्याला। सुलझानेका नाम सों प्रीति-प्रतीति-बिहीन गिल्यो कलिकाल कराल, न चूको। ज्यों-ज्यों प्रयास करते हैं, त्यों-त्यों अधिक-अधिक राखिहैं रामु सो जासु हिएँ तुलसी हुलसै बलु आखर दूको॥ उलझते ही जाते हैं। ऐसा कोई संगी-साथी भी नहीं (कवितावली उत्तरकाण्ड पद ९०)

योगवासिष्ठमें प्रारब्ध और पुरुषार्थ-विवेचन

रहकर ही शुभ फलको प्राप्त किया जा सकता है। अतः शुभ कर्ममें सदैव संलग्न रहना ही हमारे ध्यान, चिन्तन और स्मरणमें रहना चाहिये। महर्षि वसिष्ठका भी यही कहना है—'इस संसारमें सदा अच्छी तरह पुरुषार्थ (प्रयत्न) करनेसे सबको सब कुछ मिल जाता है। जहाँ कहीं किसीको असफल देखा जाता है, वहाँ उसके

'उससे भिन्न जो शास्त्र-विपरीत मनमाना आचरण

'श्रुति-स्मृति आदि शास्त्रसे नियन्त्रित पुरुषार्थके

सम्पादनमें तत्पर जो पुरुषका पौरुष (उद्योग) है, वही

मनोवांछित फलकी सिद्धिका कारण होता है। शास्त्रके

विपरीत किया हुआ प्रयत्न अनर्थकी ही प्राप्ति करानेवाला

होता है। कोई पुरुष जब शास्त्रीय प्रयत्नको शिथिल कर

देता है, तब स्वयं दरिद्रता, रोग और बन्धन आदि अपनी

दुर्दशाके कारण वह ऐसी अवस्थामें पहुँच जाता है, जहाँ

उसके लिये पानीकी एक बूँद भी बहुत समझी जाती है।'

इसके बाद देखा जाता है कि शुभ कर्म करते

(योगवासिष्ठ-मुमुक्षुव्यवहार प्रकरण: सर्ग-३-४)

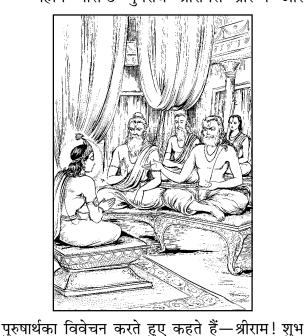
है, वह पागलों-सी चेष्टा है। जो मनुष्य जिस पदार्थको पाना चाहता है, उसकी प्राप्तिके लिये यदि वह क्रमश: यत्न करता है और बीचमें ही उससे मुँह नहीं मोड़ लेता

सम्यक् प्रयत्नका अभाव ही कारण है।'

तो अवश्य उसे प्राप्त कर लेता है।'

## ( श्रीरामिकशोरसिंहजी 'विरागी', एम०ए०, एल-एल०बी० )

श्रीरामसे प्रारब्ध और फलकी प्राप्ति नहीं हो सकती है। शुभ कर्मोंमें संलग्न महर्षि वसिष्ठ युवराज



जीवनमें शुभ कर्म या कर्मोंका नित्य-निरन्तर संपादन होता रहे; क्योंकि जीवनमें अपने द्वारा किये गये या किये जा रहे कर्म या कर्मोंका ही फल (परिणाम) आता रहता

फल (परिणाम)-की कामना अपने जीवनमें हर कोई

करता है या करता रहता है। परंतु इस शुभ फलका

शुभागमन जीवनमें तभी होता है या होता रहता है, जब

छोटे-बडे कर्मोंका फल ही जीवनमें आता है। कर्मफलके अतिरिक्त और किसी भी चीजका फल जीवनमें नहीं आता है। कर्मफलका सिद्धान्त अकाट्य, निश्चित और

है। कर्मफलका सिद्धान्त जीवनके साथ संलग्न है। हर

अवश्यम्भावी है।

अब जहाँतक सवाल है कि शुभ फल तो हर कोई अपने जीवनमें चाहता है। शुभ फलकी कामना हर किसीके मन और अन्त:करणमें विद्यमान है या होती है।

परन्तु शुभफलके लिये जो शुभ कर्म अपने द्वारा सम्पन्न होना चाहिये या होते जाना चाहिये, लोग उसका ध्यान

तब ऐसा सोच-सोच करके कर्ता उदास हो जाता है और नहीं induisqq Discoyd Setter https://elec.goddharma | yMAAE WITH QVE BY Axinast/Sta

रहनेके बाद भी मनोवांक्षित फल (परिणाम) जीवनमें नहीं आने पाता है। तब कर्ता (करनेवाला) निराश और

हताश हो जाता है और सोचने लगता है कि जो दैव

(प्रारब्ध)-में लिखा है, वही होगा। कितना भी अच्छा

करेंगे तो परिणाम विपरीत ही होगा; क्योंकि यह फल

दैव (प्रारब्ध)-के अनुसार ही मिलता है या आता है।

	और पुरुषार्थ-विवेचन २३
कर्मोंमें वह अपना समय व्यतीत करने लगता है।	निराश न हो, हताश न हो, बल्कि नये ढंग, नये उत्साह
अन्यमनस्क ढंगसे अपनी शान्ति और ऊर्जा नष्ट करने	और नवीनतम प्रेरणाको ग्रहण करते हुए शुभ कर्ममें लग
लगता है। कोई इस मनोवृत्तिके कारण अपने जीवनको	जाना चाहिये और लगा रहना चाहिये। महर्षि वसिष्ठ
दुर्गितिमें डाल देता है। महर्षि वसिष्ठ इस मनोवृत्ति और	कर्त्ताको कर्मकी प्रेरणा देते हुए कहते हैं—
मानसिक समस्याका समाधान करते हुए कहते हैं—	'पूर्वजन्मके तथा इस जन्मके पुरुषार्थ (कर्म) दो
'यह पूर्वजन्मका पुरुषार्थ (प्रारब्ध) मुझे प्रेरित	भेड़ोंकी तरह आपसमें लड़ते हैं। उनमें जो भी बलवान्
करके विशेष परिस्थितिमें डाल देता है, इस प्रकारकी	होता है, वही दूसरेको क्षणभरमें पछाड़ देता है। इस
बुद्धिको बलपूर्वक कुचल डालना चाहिये; क्योंकि वह	जन्ममें किया प्रबल पुरुषार्थ अपने बलसे पूर्वजन्मके
प्रत्यक्ष प्रयत्नसे अधिक प्रबल नहीं है। तबतक प्रयत्नपूर्वक	पौरुष या दैवको नष्ट कर देता है और पूर्वजन्मका प्रबल
उत्तम पुरुषार्थके लिये सचेष्ट रहना चाहिये; जबतक कि	पौरुष इस जन्मके पुरुषार्थको अपने बलसे दबा देता है।
पूर्वजन्मका अशुभ पौरुष स्वयं पूर्णत: शान्त न हो जाय।	पूर्वकृत कर्मोंके फलस्वरूप प्रारब्ध और वर्तमान जन्मके
अर्थात् जबतक पहले जन्मोंका किया हुआ अशुभ कर्म	पुरुषार्थ—इन दोनोंमें वर्तमान जन्मका पुरुषार्थ ही प्रत्यक्षत:
समूल नष्ट न हो जाय, तबतक तत्परतासे उत्साहपूर्वक	बलवान् है, इसलिये अधिकारी मनुष्यको पुरुषार्थका
साधन करते रहना चाहिये।'	सहारा लेकर सत्-शास्त्रोंके अभ्यास और सत्संगद्वारा
'जैसे अपने द्वारा कल घटित हुए दोषका आज	बुद्धिको निर्मल बनाकर संसार–सागरसे अपना उद्धार कर
प्रायश्चित्त कर लेनेपर नाश हो जाता है, उसी प्रकार इस	लेना चाहिये। इस जन्मके और पूर्वजन्मके दोनों पुरुषार्थ
जन्मके गुणों (शुभ पौरुष)-से पूर्वजन्मका दोष (अशुभ	पुरुषरूपी वनमें उत्पन्न फल देनेवाले वृक्ष हैं। उन दोनोंमें
पौरुष) अवश्य नष्ट हो जाता है, इसमें कोई संशय नहीं	जो अधिक बलवान् होता है, वही विजयी होता है
है। पूर्वजन्मके अशुभ या दु:खदायक प्रारब्धको इस	अर्थात् धर्माचरण और मुक्तिके विषयमें तो इस जन्मका
जन्मके शुभ कर्मोंसे विशुद्ध एवं पुष्ट हुई बुद्धिके द्वारा	पुरुषार्थ बलवान् है और अर्थ एवं कामके विषयमें
तिरस्कृत करके संसार-सागरसे पार होनेके उद्देश्यकी	पूर्वजन्मका फलदानोन्मुख कर्म या दैव प्रबल है।'
सिद्धिके लिये अपने भीतर दैवीसम्पत्तिके संग्रहके निमित्त	इस विषयको इस प्रकार समझा जा सकता है—
सदा यत्न करना चाहिये। उद्योगशून्य आलसी मनुष्य	जैसे पूर्वजन्मके किसी प्रतिबन्धक कर्मके कारण किसी
गदहोंके समान गये-बीते हैं। अत: स्वयं भी उद्योग	मनुष्यको पुत्रकी प्राप्ति नहीं होनेवाली है; परंतु यदि वह
छोड़कर उन्हींकी श्रेणी या तुलनामें नहीं जाना चाहिये।	पुत्र-प्राप्तिके लिये शास्त्रीय विधानके साथ पुत्रेष्टि-यज्ञ
शास्त्रके अनुसार किया हुआ उद्योग इहलोक और परलोक	अथवा उसी कोटिके दूसरे किसी सत्कर्मका अनुष्ठान
दोनोंकी सिद्धिमें कारण है। मनुष्यको पुरुषार्थरूपी प्रयत्नका	करता है तो उसे पुत्रकी प्राप्ति हो जाती है। यहाँ
आश्रय लेकर इस संसाररूपी गड्ढेसे बलपूर्वक निकल	पूर्वजन्मके प्रतिबन्धक कर्मसे इस जन्मका पुरुषार्थ
जाना चाहिये।' (योगवासिष्ठ-मुमुक्षुप्रकरण: सर्ग-५)	अधिक बलवान् होनेके कारण नवीन प्रारब्धका निर्माण
महर्षि वसिष्ठ हर प्रतिकूल और विपरीत दशामें	करके विजयी हो जाता है। इसी प्रकार पूर्वजन्मके
शुभकर्म (पुरुषार्थ)-की ओर प्रेरित करते हैं; क्योंकि	कर्मानुसार यदि किसीकी मृत्यु अवश्यम्भावी है तो उसके
विपरीत फल (परिणाम) अपने लिये पौरुष या पुरुषार्थका	प्रतीकारके लिये अनेक प्रकारके उपाय करनेपर भी
परिणाम है जिसे सामने पाकर घबड़ाये नहीं, उदास और	मनुष्य उसे टाल नहीं पाता। अतः यहाँ पूर्वकृत कर्म

<u>ष्ट्रित या प्रार</u>न्थ) ही प्रबल होनेके कारण विजयी होता पर्यायवाची शब्द 'दैव' है। है। (योगवासिष्ठ-मुमुक्षुप्रकरण: सर्ग ६) इस प्रकार पौरुषसे मनुष्य इस जगत्में सभी कुछ

सर्ग ७—९)

िभाग ९२

प्राप्त कर सकता है, दैवसे नहीं। अत: वह पुरुषार्थ

तुम्हें शुभफल देनेवाला हो। (योगवासिष्ठ-मुमुक्षुप्रकरण:

ध्यानमें रखना है और करना है। अगर परिणाम बीच-

बीचमें विपरीत और मनके अनुकूल नहीं भी आ रहा है

आयेगा और आता रहेगा। यही दृढ़ धारणा और मान्यता मन और अन्त:करणमें रख करके शुभ कर्ममें सदैव

संलग्न रहे और जीवनके परम शुभ फल शान्तिको प्राप्त

अत: निष्कर्ष यही निकलता है कि सदैव कर्मोंमें

'शुभ पुरुषार्थसे शुभ फल प्राप्त होता है और ही संलग्न—तत्पर रहना चाहिये। वर्तमानमें आजके अशुभ पुरुषार्थसे अशुभ। अत: तुम्हारी जैसी इच्छा हो, समयमें अभीके समयमें हर क्षण और हर पलमें व्यतीत वैसा करो। अपने परम अभीष्ट वस्तुको प्राप्त करनेवाले हो रहे इस क्षण और पल शुभ कर्ममें सम्पन्न हों—यही

प्राप्त किया जाता है। अपने पैरोंद्वारा एक स्थानसे दूसरे तो घबड़ाना नहीं है। निराश-हताश और उदास नहीं स्थानमें जाना, हाथका किसी द्रव्यको धारण करना तथा होना है। पूर्वजन्म या पूर्वकाल (समय या अवधि)-में दूसरे-दूसरे अंगोंका तदनुकूल व्यापारमें प्रवृत्त होना— कोई-कोई कर्म अपने द्वारा अशुभ हो गया हो तो उसके यह सब पुरुषार्थसे ही सम्भव होता है, दैवसे नहीं। कारण ही विपरीत फल आ रहा है। परन्तु और अधिक 'एकमात्र पुरुषार्थसे सिद्ध होनेवाला जो अवश्यम्भावी या बार-बार विपरीत फल नहीं आने पाये—इसके लिये

फल है, वही इस जनसमुदायमें 'दैव' शब्दसे प्रतिपादित मनोयोगपूर्वक और उत्साहके साथ शुभ कर्ममें संलग्न, होता है। सिद्ध पुरुषार्थके शुभ और अशुभ फलका उदय गम्भीर तथा तत्पर रहा जाय तो अन्ततः जीवनमें शुभ होनेपर जो यह कहा जाता है कि 'यह इसी रूपमें फल आयेगा ही। भले ही कुछ या कभी-कभी अशुभ मिलनेवाला था—यही होनहार थी' इसीको दैव कहते हैं।' फल मनको दुखित और उदास करनेवाला आ जाय। 'मेरा पूर्वजन्मका कर्म ही ऐसा था', इस तरहकी लेकिन जीवनमें शान्ति देनेवाला शुभ फल ही अन्ततः

भावनाको व्यक्त करनेवाला वचन ही 'दैव' कहलाता

है। पूर्वजन्ममें फलकी उत्कट अभिलाषा होनेसे जो कर्म

प्रबल प्रयत्नके द्वारा किया जाता है, वही इस जन्ममें

'जो लोग उद्योगका त्याग करके केवल दैवके

भरोसे बैठे रहते हैं, वे आलसी मनुष्य स्वयं ही अपने

शत्रु हैं। वे अपने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों

एकमात्र कार्यके प्रयत्नमें जो तत्पर हो जाना है, उसीको

विद्वान् पुरुष पौरुष कहते हैं। उस तत्परतासे ही सब कुछ

पुरुषार्थींका नाश कर डालते हैं।'

ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्ति द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्त्वमस्यादिलक्ष्यम्। एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं भावातीतं त्रिगुणरहितं श्रीविसष्ठं नताः स्म॥ जो ब्रह्मानन्दस्वरूप अथवा ज्ञानोपदेशद्वारा ब्रह्मानन्दकी प्राप्ति करानेवाले, परम सुखद, अद्वितीय ज्ञानमूर्ति,

द्वन्द्वोंसे रहित, आकाशसदृश निर्मल, 'तत्त्वमिस' आदि वेदान्त महावाक्योंके लक्ष्यार्थरूप, एक, नित्य, निर्मल, निश्चल, सम्पूर्ण बुद्धि-वृत्तियोंके साक्षी, समस्त भावोंसे परे तथा तीनों गुणोंसे रहित हैं; उन परब्रह्मस्वरूप श्रीविसिष्ठजीको हम नमस्कार करते हैं। [ योगवासिष्ठ ] संख्या ११ ] उत्तम गृहवधू उत्तम गृहवध्र ( परम पुज्य स्वामी श्रीगोविन्ददेवगिरिजी महाराज ) वेदोंमें प्रतिपादित आश्रमव्यवस्थामें गृहस्थाश्रमकी नष्ट न करें। विशेष महत्ता गायी गयी है। मनुस्मृतिमें कहा गया है— ॐ सुमङ्गलीरियं वधूरिमाः समेत पश्यत। यथा वायुं समाश्रित्य वर्तन्ते सर्वजन्तवः। सौभाग्यमस्यै दत्त्वा याथास्ति विपरेत न॥ तथा गृहस्थमाश्रित्य वर्तन्ते सर्व आश्रमाः॥ समाजका केन्द्र होता है 'परिवार' और परिवारका (मनु० ३। ६६) केन्द्र होती है, घरमें अनेकरूपोंमें आनेवाली गृहलक्ष्मी। भगवान् मनुका तो यहाँतक कहना था कि हमलोग घरकी व्यवस्था, सुख-शान्ति, सबके साथ बनाया देव-ऋण, पितृ-ऋण और ऋषि-ऋणसे मुक्त होनेके गया सम्बन्ध, घरका माहौल आदि इन सभी बातोंपर बाद ही अपना मन मोक्षकी ओर बढ़ायें। इन तीनों नववधूके व्यक्तित्वका प्रभाव सहजताके साथ पड़ता ऋणोंसे मुक्ति पानेके लिये गृहस्थाश्रम अनिवार्य होता है। है। घरकी प्रतिष्ठाकी रीढ़की हड्डी यदि कोई है तो महाकवि कालिदास तो गृहस्थाश्रमको 'सर्वोपकारक्षम' वह है-गृहिणी। वह कैसी हो? इस सन्दर्भमें अपनी कहते हैं। अन्य तीनों आश्रम गृहस्थ-आश्रमपर ही टिके अपेक्षाओंका वर्णन अत्यन्त संक्षेपमें और स्पष्ट शब्दोंमें हुए हैं। गृहस्थाश्रमके लिये 'गृह' अर्थात् 'घर'की उपरोक्त मन्त्रमें किया गया है। अपने घरको प्रगतिकी जरूरत होती है और घरसे भी ज्यादा जरूरत होती है ओर ले जानेका दृढ़ संकल्प हर गृहिणीको करना उत्तम 'गृहिणी'की—'न गृहं गृहमित्याहु: गृहिणी चाहिये। वह सबकी 'तारिणी' बने। ऐहिक उत्कर्ष गृहमुच्यते।' यहाँपर गृहिणीको यथार्थ गौरव प्रदान होते समय समृद्धिकी दिशाको वह भोगविलासकी किया गया है। गृहस्थाश्रमके केन्द्रमें स्थित यह गृहिणी ओर न मोड़े, अपितु शिक्षा, आरोग्य, सद्विचार-जैसे कैसी होनी चाहिये? इस सन्दर्भमें मार्गदर्शन करते हुए सद्गुणोंके विकासकी ओर ही वह अग्रसर हो। घरके वैदिक ऋषि कहते हैं-हर सदस्यकी इस दिशामें प्रगति हो-ऐसी भावना रखकर घरका वातावरण मंगलमय बनाये रखनेके लिये सुमंगली प्रतरणी गृहाणां सुशेवा पत्ये श्वशुराय शम्भू:। उसे सदैव जाग्रत् रहना चाहिये। परिवारकी जटिलसे श्वश्र्वै विशेमान्॥ स्योना प्र गृहान् जटिल समस्याको चुनौती समझकर उस समस्याका (अथर्ववेद २४। २। २६) विवाहके बाद नये घरमें नववधूका पदार्पण होता समाधान ढूँढनेकी कोशिश उसे करनी चाहिये। है। ऐसी मंगल वेलाके समय ऋषि उसे कहते हैं— पतिके संग उसे अन्य कई कर्तव्योंका पालन करना 'गृहस्थोंके लिये कल्याणप्रदा एवं उद्धारकर्त्री देवी! तुम पड़ता है। सास-श्वसुरको तथा अन्य सभी पारिवारिक अपने पतिकी मनसे सेवा करनेवाली, श्वसुरको सुखशान्ति सदस्योंको अपने आचार-व्यवहारसे सुख-शान्ति मिले, प्रदान करनेवाली और अपनी सासके लिये सुखदायक इस बातकी ओर भी उसे हमेशा ध्यान देना चाहिये। नारी हो। तेरा इस घरमें प्रवेश करते समय स्वागत है।' आदर्श बहुका यह वेदोंमें व्यक्त किया हुआ चित्र भगवती सीता तथा महासती द्रौपदीके जीवनमें साकार इस मन्त्रमें आशीर्वाद और अपेक्षाका सुन्दर मिलाप करते हुए 'आदर्श बहु'का चरित्र समाजके सम्मुख प्रस्तुत नजर आता है। किया गया है। वैदिक ऋषि नववधूके लिये मंगल वनवासके समय एक बार श्रीकृष्ण सत्यभामा-कामना करते हुए कहते हैं—'हे विवाह देवता! यह वधू सहित पाण्डवोंसे मिलने वनमें गये। वहाँ एकान्तमें सत्यभामाजीने द्रौपदीसे पूछा—'तुमने कौनसे मन्त्रसे सुमंगली है—मंगलरूपा है, अतः इसे आप मंगल दृष्टिसे देखें। इस वधूको सौभाग्य प्रदान करें। इसके गार्हस्थ्यको सबको वशमें कर रखा है? सत्यभामाके इस प्रश्नका

उत्तर देते हुए द्रौपदीने परिवारवालोंके बीच अपनी

दिया जाता है और पाण्डवोंकी हार होती है, तब भी धृतराष्ट्रसे वर माँगकर द्रौपदीने अपने पतियोंकी शस्त्रोंसहित मुक्ति करवायी और अब मुझे पतियोंके अलावा अन्य

> उसने पत्नीपदकी प्रतिष्ठा बढ़ायी थी। सत्कर्ममें जो हमेशा साथ दे, वही उत्तम पत्नी है।

सेवा करती हूँ। कभी गर्व नहीं करती। मेरे पित जैसा चाहते हैं, वैसा ही कार्य करती हूँ। उनपर कभी संदेह नहीं करती और न उनसे कभी कठोर वचन ही कहती हूँ। कभी निन्दित स्त्रियोंकी संगितमें

नहीं बैठती और न उनसे मित्रता ही रखती हूँ।

इस प्रकार द्रौपदीने 'उत्तम गृहवध्' बननेके

और भी अनेक उपायोंसे सत्यभामाजीको परिचित कराया। पाण्डवोंको कर्मयोगकी प्रेरणा देनेवाली इस महान् पत्नीको जब द्यूतक्रीडामें पाण्डवोंद्वारा दाँवपर लगा

किसीसे कुछ भी याचना नहीं करनी—ऐसा जवाब देकर

है—ऐसा वेदोंमें स्पष्टरूपसे कहा गया है। बहू घरकी लक्ष्मी है, बहू घरकी देवी है, बहू घरकी शान्ति है और

भूमिकाका प्रतिपादन इस प्रकार किया। प्रात: सबसे पत्नीरूपी नौकाके कारण ही पितको संसारसागरको पार पहले मैं उठती हूँ। माता कुन्तीके स्नानादिकी तैयारी करना सम्भव होता है। धर्मपत्नीरूपी नौका कैसी मैं स्वयं करती हूँ। पितदेवों और उनके मित्रोंके खान- हो? इस सन्दर्भमें वैदिक ऋषियोंद्वारा किया गया मार्गदर्शन पानकी आवश्यकताओंको मैं स्वयं पूर्ण करती हूँ। अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है। सेवा और सात्त्विकताके घरका तथा अपने राज्यका हिसाब-किताब देखे बिना बलपर सबको जीतनेवाली बहू गृहराज्यकी साम्राज्ञी होती

करती हूँ। मैं अहंकार, काम, वासना, क्रोध तथा बहू ही घरके विकासकी जड़ है। — <del>→ • ◆ • •</del>

राम

कभी भी मैं सोती नहीं। घरके सभी नौकर-चाकर

तथा हजारों अतिथियोंका स्वागत-सत्कार मैं स्वयं

### 'जो मोहि राम लागते मीठे'

लागते

☐ तौ नवरस षटरस-रस अनरस ह्वै जाते सब सीठे॥
☐ बंचक बिषय बिबिध तनु धिर अनुभवे सुने अरु डीठे।
☐ यह जानत हौं हृदय आपने सपने न अघाइ उबीठे॥
☐ तुलिसिदास प्रभु सों एकिह बल बचन कहत अति ढीठे।
☐ नामकी लाज राम करुनाकर केहि न दिये कर चीठे॥

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADENVITER DISCORD Server https://dsc.gg/dharma | MADENVITER DISCORD SERVER Avinash/Sha

संख्या ११ ] विकासका भयावह पक्ष विकासका भयावह पक्ष ( श्रीगणेशदत्तजी दुबे ) हमारी आध्यात्मिक सोचके साथ वैज्ञानिक प्रगति भोजन वायु तथा जलकी हमारे जीवनके लिये महती हमें ऐसे सत्योंकी ओर ले आयी जबकि हम अनबूझ आवश्यकता है। ये तीनों ही जब प्रदूषित हो गये हैं तो रहस्योंको भी समझने और जानने लग गये। पिक्षयोंकी मानव-जीवन कैसे बचेगा? यदि आजके युगमें यक्ष तरह हमारे पंख लग गये। संचार और यातायातके साधनोंकी युधिष्ठिरसे पूछता 'किं आश्चर्यम् ?' तो युधिष्ठिर यही कहते कि इतने प्रदूषणके होते हुए भी मनुष्य जीवित है, उन्नतिके साथ-साथ दुनिया ग्लोबल विलेजमें बदलती जा रही है और ब्रह्माण्ड भी हमें छोटा लगने लग गया है। यही आश्चर्य है। अब एक और बड़ी त्रासदीसे मनुष्य अणुशक्तिके रूपमें हमें अपरिमित शक्तिका स्रोत नजर गुजरनेवाला है। आया, परंतु हिरोशिमा तथा नागासाकीके विध्वंस तथा वैज्ञानिक इस खतरेकी ओर भी सबका ध्यान आकर्षित चेरनोबिल (रूस)-के रिएक्टरके आणविक रसायनके करने लगे हैं कि पृथ्वीका तापमान जब आगे बढ जायगा तथा रिसावने हमें भयभीत कर दिया है। जिसे हम अलादीनका पर्वतोंपर जमा हिम पिघलकर समुद्रमें पहुँचेगा तो इससे चिराग समझ बैठे थे, वही चिरागका जिन्न हमारी आज्ञाओंको सागरोंका जलस्तर बढ़ जायगा। ऐसेमें क्या शास्त्रोंमें वर्णित माननेके बजाय हमें ही डराने लगा है। जलप्लावनकी ओर हम असमय ही अग्रसर नहीं हो रहे हैं ? बहुत कुछ हमें विज्ञानसे मिला है, परंतु मनुष्यने वनस्पतियाँ एवं पेड़-पौधे हमारी हरी-भरी धरती अन्ततोगत्वा वैज्ञानिक प्रगतिके नामपर अपनेको केवल मॉॅंके लिये शृंगार हैं। ये हमारे लिये आवश्यक प्राणवायुको भय ही दिया है। वैज्ञानिक उपकरणोंसे उत्पन्न गैसोंसे सन्तुलित बनाये रखते हैं। हमारी औद्योगिक तथा सामाजिक हमने अपने आकाशमें ओजोनके परतमें छेद कर दिया है, गतिविधियाँ इतनी खतरनाक हो गयी हैं कि हमने अन्धाधुन्ध जिससे कि मनुष्यको भय लगने लगा है कि सुरजकी धूपमें पेड काटने शुरू कर दिये। वनोंके विनाशने हमें ऐसे हम निकलनेको तरसने लगेंगे। हमारे कल-कारखानों, कगारपर ला खड़ा किया कि आज पर्यावरणका सन्तुलन ही मोटर-वाहनों तथा मशीनोंने इतना धुआँ उगलना प्रारम्भ बिगड़ गया। आज यही पेड़ हमारे मित्र प्रतीत हो रहे हैं। हम किया (जिनमें अनेक हानिकारक गैसें होती हैं) कि आज कंक्रीटकी विशाल अट्टालिकाओं छतों तथा छज्जोंपर अपनी सुरक्षाके लिये हम कहने लगे कि साइकिलपर भी हरीतिमाका प्रबन्ध करनेकी सलाह देने लगे हैं। चलो और वाहनोंका प्रयोग कम करो। उनका रख-रखाव ध्वनिविस्तारक यन्त्रोंका आविष्कार इस उद्देश्यसे ऐसा करो, जिससे कि वे कम हानिकारक गैसें निकालें। किया गया था कि हम किसी भी वक्ताकी बातोंको ठीक ताजा आकलनसे ज्ञात होता है कि वायुका ६० प्रतिशत ढंगसे सुन सकें। आज तो हालत यह हो गयी है कि ये ध्वनिविस्तारक यन्त्र, चाहे मोटर-गाडियोंमें लगे हों या प्रदूषण केवल वाहनोंसे निकली गैसोंसे है। शरीरका अस्सी प्रतिशत तो जल ही है। अतएव जल किसी सभास्थलपर, हमारे लिये ध्वनिप्रदूषणका कार्य कर ही जीवन है, परंतु जल भी तो प्रदूषित हो गया है। गंगा, रहे हैं। यदि पूजाका कार्य हो तो भी ध्वनिविस्तारकसे जिसे हम युगोंसे पूजनीय मानते आये हैं और जो 'दरस इतना शोर मचाते हैं कि पड़ोसीको इस पूजाके प्रति श्रद्धा परस मजान अरु पाना 'से मुक्ति दिलानेका सामर्थ्य रखती होनेके बजाय क्रोध आने लगता है। ध्वनिविस्तारक यन्त्रोंपर है, कल-कारखानोंके कचरेने उसके भी अस्तित्वको संकटमें अखण्ड कीर्तनकर हम किसे बता रहे हैं ? भगवानुको या डाल दिया है। कहीं-कहीं उसमें प्रदूषणका स्तर इतना बढ़ पड़ोसीको जता रहे हैं कि हम पूजा या कीर्तन कर रहे हैं ? गया है कि लोग उसमें स्नान करनेसे कतराते हैं तथा पान अन्त:करणकी आवाज सुन लेनेवाले भगवान्को क्या

ध्वनिविस्तारककी ध्वनिकी आवश्यकता पडने लगी!

करनेका तो उनके लिये प्रश्न ही नहीं उठता।

भाग ९२ \*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\* ध्वनिप्रदूषण तो इतना बढ़ गया है, कि अब बहरे हो परतमें छेदके कारण दक्षिणी गोलार्धमें सूरजकी रश्मियोंक जानेका खतरा भी बढ गया है। कारण चर्म कैंसर होनेका खतरा बढ़ गया है। टेलीविजन जो हमारे लिये वरदान बनकर आया हमने तो वैज्ञानिक अनुसन्धानकर अपनी आर्थिक तथा था, दुनियाके किसी भी कोनेमें घटनेवाली घटनाको हम सामाजिक स्थितिको बेहतर बनानेका सोचा था। मनुष्यने उसके द्वारा देख सकते थे। परंतु अब तो यह खतरा सोचा था कि इससे उसे सुख मिलेगा, परंतु वही हुआ कि उत्पन्न हो गया है कि टेलीविजनके ट्यूबसे निकली ज्यों-ज्यों दवा की, मर्ज बढ़ता गया। अणुशक्ति जो कि किरणें हमारी आँखोंको क्षतिग्रस्त न कर दें। इसके हमारे लिये महाशक्तिके रूपमें सामने आयी थी, आज कारण हमारी जिन्दगी कमरोंमें सीमित हो गयी। वह महाविनाशका दृश्य भी सामने ला रही है। अब तो हालत यह हो गयी है कि हमारी सारी व्यवस्था ही गड़बड़ा विद्यार्थियोंपर तो इसने सबसे अधिक प्रभाव डाला है। उनकी शिक्षा प्रभावित होने लगी है। गयी है। जनसंख्या-विस्फोट भी संसारको अलगसे चिन्तित आधुनिक चिकित्सातकमें अनेक रासायनिक औषधियाँ किये है। यह लग रहा है कि यदि हमने अभी कुछ नहीं हानिकारक होनेके कारण प्रतिबन्धित होने लगी हैं। अब किया तो इक्कीसवीं सदीके दस-बीस साल बाद धरतीपर तो पेड़-पौधोंसे बनी दवाएँ ही हम निरापद समझ रहे हैं। उगाया अन्न दो जुनके भोजनके लिये भी कम पडेगा। अब हमारी सोचमें अन्तर आने लगा है। हमने विभिन्न इसी कारण हम सागरसे निकलनेवाले खाद्य-पदार्थींको प्रयोग करके देख लिया कि प्रकृतिका सामीप्य ही सबसे वैकल्पिक भोजन बनानेकी ओर अग्रसर हो रहे हैं। यदि सुखद तथा कम-से-कम कष्ट देनेवाला है। एयर-यही गति रही तो इक्कीसवीं सदीमें रास्ते चलते मनुष्यका कण्डीशनरोंसे ऊबे लोग पुरवा बयारकी चाह करने लगे कन्धा छिलने लग जायगा। आज ही हम सड़कोंपर इस हैं। पीपलकी छाँव उन्हें भली लगने लगी है। जनसंख्याके प्रभावको देखते हैं। कदम-कदमपर यातायातमें कहनेका यह तात्पर्य नहीं कि जो पुराना था, वह अवरोध इसी जनसंख्या-वृद्धिका ही परिणाम है। बहुत अच्छा था और नयेमें कुछ भी अच्छा नहीं है। मनुष्यका आसपासका वातावरण एक कूडाघर-सा प्रगतिके नामपर हमने अपने चतुर्दिक् विनाशके ऐसे हो गया है। अपना शौर्य दिखानेको, दल-के-दल ऐवरेस्टपर साधन जुटा लिये हैं, जिससे मनुष्यके अपने ही तो चढ़ गये, परंतु उसके चढ़ानोंपर इतना कचरा छोड़ आये अस्तित्वपर प्रश्निचह्न लग गया है। मनुष्य यह सोचनेको जो कि आनेवाले दलोंके लिये एक समस्या बन गया है। विवश हो गया है कि इक्कीसवीं सदी सुखद होगी या हमारे आसपासकी भूमि खारी तथा बंजर होने लगी किसी नयी त्रासदीको सामने लायेगी? है। जो समुद्री तूफान कभी–कभार आते थे, उन्होंने तो इन वैज्ञानिक उपलब्धियोंके बावजूद मनुष्य आज आज अपनी आदत बना ली है। हमारे कल-कारखाने, अपनी भावी पीढीके प्रति चिन्तित है। वस्तुत: यह सब वायुमण्डलमें ऐसी गैसें छोड़ रहे हैं कि बादल कभी हमारी भोगवादी प्रवृत्तिका ही परिणाम है, जो अनेक पानीकी जगह तेजाब बरसाने लग जाते हैं। प्रकारकी तृष्णाओंको जन्म देती है। हमारा सनातन धर्म इस समस्याके समाधानरूपमें कहता है— पृथ्वीकी गरमीका बढना हमारे समुद्रोंके जलस्तरके बढ़नेका कारण बन रहा है। इससे मिट्टी कटकर समुद्रमें योऽसौ प्राणान्तिको रोगस्तां तृष्णां त्यजतः सुखम्॥ जा रही है। केरलमें तो तटके किनारे दीवाल बनाकर (महा० वन० २। ३६) समुद्रको आगे बढ़नेसे रोकनेका प्रयास होने लगा है। अर्थात् तृष्णा एक प्राणान्कारी रोगके सदृश है, ऐसी आर्कटिक इसी गरमीके कारण गलने लगा है। ओजोनकी तृष्णा को जो त्याग देता है, उसीको सुख मिलता है।

आत्मशान्ति—क्यों एवं कैसे ? संख्या ११ ] आत्मशान्ति—क्यों एवं कैसे ? ( श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी ) प्रत्येक मनुष्यको आत्मशान्तिकी अभिलाषा रहती हम कुछ नहीं सोचें तथा प्रयास नहीं करें। परंतु प्रगतिके है। वैसे आत्मशान्ति आत्माके स्वभावमें ही निहित है, विषयमें सोच और प्रयास धर्मसम्मत होना चाहिये। उससे परंतु जिस प्रकार स्वयंकी नाभिमें रही हुई कस्तूरीसे किसीको भी शारीरिक या मानसिक रूपसे पीड़ा न पहुँचे, हिरण अनिभज्ञ रहता है, वैसे ही अन्तरंगकी आत्मशान्तिका तभी हमें भी आत्मशान्ति मिलेगी। वही व्यक्ति प्रगति कर हम अनुभव नहीं कर पाते। समुद्रके मध्यबिन्दुमें लहरोंकी सकता है, जिसका लक्ष्य उच्च होता है तथा वही अपने उथल-पुथल नहीं होती बल्कि किनारोंसे टकराती हुई लक्ष्यकी प्राप्तिमें सफल होता है, जो सदा परिश्रमशील वही लहरें कभी अन्दर कभी बाहर होती हैं। इसी प्रकार होता है। केवल अपने नामके लिये अत्यधिक धनोपार्जन-मनके माध्यमसे इच्छाओं तथा आकांक्षाओंकी तरंगें कर सम्पत्ति बढानेसे आत्मशान्ति प्राप्त नहीं हो सकती है; उठती रहती हैं, जो आकुलता-व्याकुलताओंको उत्पन्न क्योंकि ज्यों-ज्यों धन तथा सुख-साधनोंमें वृद्धि होगी, तृष्णा अधिक बढ़ेगी। सुख-साधनोंकी वृद्धि होनेसे करती हैं। आकुलता-व्याकुलता एवं संकल्प-विकल्पका प्रभुका सुमिरन कम होगा। सन्तोंने कहा है— उद्गम-स्थान मन ही है। मनविहीन आत्मा परमशान्तिका धाम है। मन उस सीढ़ीके समान है, जिससे ऊपर भी दुख में सुमिरन सब करै, सुख में करै न कोय। चढा जा सकता है तथा नीचे भी उतरा जा सकता है। जो सुख में सुमिरन करै, दुख काहे को होय॥ मन आत्मारूपी तालेकी वह चाबी है, जिससे ताला सुखोंमें मनुष्य प्रभुको भूल जाता है, उसका खुलता भी है और बन्द भी होता है। मनकी एकाग्रतासे ही आत्माकी शान्ति सम्भव है, अहंकार बढ़ जाता है और अहंकारी व्यक्तिको आत्मशान्ति परंतु मनकी एकाग्रता इतनी सरल नहीं है, बल्कि बहुत प्राप्त नहीं हो सकती। अत: मायाके वशीभूत न होकर कठिन प्रयास है। जगत्में मानवमात्र आत्मशान्ति, आत्मतृप्ति सदैव प्रभुका स्मरण अवश्य करना चाहिये। रोजाना तथा आत्मसन्तोषके लिये जीवनपर्यन्त भाग-दौड़ करता टी०वी० देखने, गप्प-शप्प करने तथा अपने शरीरको रहता है, इसी आशाके साथ कि अमुक इच्छाओं, सजानेमें हम कई घंटोंका उपयोग करते हैं, किंतु हमें अभिलाषाओंकी पूर्ति होनेपर सम्भवतः आत्मसन्तोष आत्मशान्ति कैसे प्राप्त हो—इसपर विचार करनेके लिये अथवा आत्मतृप्ति हो जाय, परंतु इच्छाओं, आकांक्षाओंकी हमारे पास समय नहीं होता है। आत्मावलोकनके लिये शृंखला बिना अंकुश लगाये समाप्त होनेवाली नहीं है। कुछ समय अवश्य निकालना चाहिये। जिस तरह कहा गया है कि-आपको अपने व्यवसायसे क्या लाभ-हानि हुई, प्रतिवर्ष आयु घटे यौवन हटे, कट कट जाय शरीर। इसपर विचार करते हैं, उसी तरह अपनी आत्माको आशा तृष्णा ना मिटे, कह गये दास कबीर॥ जगानेके लिये कुछ क्षण अपने अमूल्य समयमेंसे देंगे तो आत्मशान्तिके लिये सबसे मूलभूत आवश्यकता है नि:सन्देह आत्मशान्ति, अलौकिक आभा, आत्मचिन्तन मोह, माया, लोभ, तृष्णा आदिका त्याग करना। प्रभुने तथा आध्यात्मिक चरमोत्कर्षको प्राप्त कर सकते हैं। सबको मूलभूत आवश्यकताओंके लिये पर्याप्त सामग्री इसलिये निराशा छोड़कर आशावादी बनना चाहिये। उपलब्ध करायी है। हमें उसीमें सन्तोष करना चाहिये, आत्ममन्थनद्वारा आध्यात्मिक नवनीत प्राप्त होता है और किंतु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि अपनी प्रगतिके लिये आत्मशान्तिकी प्राप्ति होती है।

संत-वचनामृत ( वृन्दावनके गोलोकवासी संत पूज्य श्रीगणेशदास भक्तमालीजीके उपदेशपरक पत्रोंसे ) 🕯 जन्म-जन्मान्तरके अशुभ संस्कारोंको मिटानेके हैं। भगवानुका नाम, रूप, लीला, धाम—ये चारों समान लिये निरन्तर नाम-जप आदि साधन आवश्यक हैं। श्रेष्ठ हैं। इनमें एकता रहती है। इनमेंसे एकका भी आश्रय नाम-स्मरण ही है। दूसरे साधनोंके योग्य हम नहीं हैं। यदि कोई लेता है तो उसका कल्याण हो जाता है। इन

आवश्यक काम-काज करनेके बाद या करते-करते भी नाम-जपका अभ्यास बढाना चाहिये। नाममें प्रेम होना और भगवान्में प्रेम होना एक ही बात है। नाम-जपके साथ ही यह नहीं सोचना चाहिये कि हमें सिद्धि नहीं मिली, कोई अनुभव नहीं हो रहे हैं। नाम-जपमें एकाग्रताके बढ जानेपर विषयोंसे वैराग्य हो जायगा।

अन्त:करण यानी मन, बुद्धि, चित्त, अहंकारकी शुद्धि हो जायगी। तब स्वयं दिव्य अनुभव होने लग जायँगे। नाम-जपको ध्यानपूर्वक करना चाहिये या बिना ध्यानके? ऐसा कोई प्रश्न करे तो उसका उत्तर यह है कि

पाता है। भगवत्प्राप्तिका उपाय क्या है, इसे जीव नहीं ध्यानसहित नामका जप अति श्रेष्ठ है, परंतु आरम्भमें जानता; स्वयं ही भगवान् आकर बताते हैं। सदा जप, तप, अनुष्ठानमें निमग्न रहकर विश्व-कल्याणकी माँग यदि ध्यानसहित नाम-जप नहीं बने तो बिना ध्यानके ही जप करना चाहिये, पर जप करते समय मनको इधर-करनी चाहिये। उधर अनिष्ट विषयोंमें नहीं जाना चाहिये। जाय तो 🕯 भगवानुके नाम, रूप, धाम एवं सभी लीलाएँ मंगलमय हैं। जहाँ-जहाँ जो-जो लोग भगवान्का आश्रय रोकना चाहिये। लीला-चिन्तन या रूप-चिन्तन, शोभा-चिन्तन, धाम-चिन्तन-जो भी सम्भव हो, उसे नाम-लेते हैं, वहाँ उनको मंगल—कल्याणकी प्राप्ति होती है। जपके साथ करना चाहिये। कीर्तन करते समय गानेमें 🕯 मनमें नाम लेनेसे मुक्ति प्राप्त होती है और वाणीद्वारा उच्चस्वरसे कीर्तन करनेवालेको भक्ति प्राप्त मनको एकाग्र करना चाहिये। नामके अर्थ अथवा लिखे हुए नाममें ही मन लगाना चाहिये। कृपा करके जिह्वाके होती है। उच्चस्वरसे किया गया कीर्तन अपनी वाणीके ऊपर भगवान् ही नामके रूपमें प्रकट होते हैं। अपने साथ अपने तथा दूसरोंके भी कर्णोंको पवित्र कर देता नाम-जपका प्रचार न करके उसे गुप्त रखना चाहिये। है, अतः गौरांग प्रभ् आदि भक्तजनोंने 'उच्चैर्भाषा त् किसी साधकको नाम-जपमें लगानेके लिये अपना नाम-कीर्तनम्' को श्रेष्ठ बताया। जप-भजन कहा-बताया जा सकता है। अहंकार न 🕸 रामनाम-महिमा। 'राम=राक्षसानां मरणं हो। बड्प्पन न आये। 🕯 रामनामका आश्रय लेनेवाले ही कलियुगके दोषोंसे बचते हैं, अन्यथा बडे-से-बडा भी कोई बच नहीं सकता है। एक संत सुदामा कुटीमें रहते हैं, उन्होंने कृष्ठीको निरोग किया था। इसपर उनसे कबीरने कहा कि बताया कि मेरे सामने कलियुग आया और उसने यह

यस्मात्।' 'र' का अर्थ है राक्षसगण और 'म' का अर्थ मरण। काम, क्रोध, मान, मद आदि राक्षस जिससे मरते हैं, वह है रामनाम। श्रीकबीरके शिष्य श्रीपद्मनाभने श्रीरामनामसे

चारोंमें नाम सबसे ज्यादा सुलभ है। नाम लेनेमें कोई

विधि-विधान नहीं, अपवित्रता-पवित्रताकी भी आवश्यकता

नहीं है। यदि छल-कपट, ईर्ष्या-द्वेष आदिको छोडकर

नाम लेता है तो उसका अवश्य कल्याण हो जाता है।

हैं। 'श्रीराम जय राम जय जय राम' यह भगवन्नाम

है और वैदिक मन्त्र भी है। कम-से-कम बाईस बार जप

करनेवाला धन्य है। रामनामसे बढ़कर दूसरा कोई नाम

नहीं है। इसका जापक भक्ति-मुक्ति आदि अभीष्ट पदार्थ

🕸 'रामो विग्रहवान् धर्मः' श्रीराम धर्मकी मूर्ति

नामका इतना ही माहात्म्य नहीं है। यह संसार-बन्धन तो ਕਾਸ਼ਾਸ਼ਰਹੀ;ਤੁਸ਼ਾਹਿਤਵਰੇ। ਕਾਲ ਵੀਂ ਨਵਾਸ਼ਸ਼ੀ ਨੁਸ਼ਾਹਰਤਵਰ ਕੁਪਾਰਾ ਸ਼ਹਾਸ਼ਸ਼ਾ ਸਾਸ਼ਸ਼ ਸਾਸ਼ ਸਿਕਾਰ ਵਾਲਾ। ਵੈ 14 ਹਿਲਾ ਇੰਕੇਸ਼ਨ ਕਲਾ ਨੂੰ ਭਾਸ਼ਾਸ਼ਤ ਸਿੰਘ ਸ਼ਹਾਸ਼ਤ ਸਿੰਘ ਹੈ। ਕਲਾ ਨੂੰ ਜ਼ਰੂ ਕਲਾ ਨੂੰ ਭਾਸ਼ਾਸ਼ਤ ਸਿੰਘ ਸ਼ਹਾਸ਼ਤ ਸਿੰਘ रामकी शंकाका निवारण (डॉ० श्रीमती मीनाजी गुप्ता)

रामकी शंकाका निवारण

वनवासके समय प्रभु श्रीरामजीको केवटने गंगा ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी आपका ध्यान धरते हैं। जब

लक्ष्मणसहित यमुना पारकर सत्संग-लाभ प्राप्त करनेहेतु महर्षि वाल्मीकिके आश्रममें पधारे। पहले श्रीरामने, फिर सीताजी और लक्ष्मणजीने मुनिवरको प्रणाम किया। महर्षिने उन्हें आशीर्वाद देकर उचित आसनपर बैठाया। फिर उन्होंने कन्द-मूल-फल लाकर अतिथियोंको ग्रहण करनेके लिये प्रेमपूर्ण आग्रह किया। मुनिवरका आतिथ्य ग्रहणकर श्रीरामने आदरपूर्वक हाथ जोड़कर विनती की,

पार करवायी। फिर वे भारद्वाजमुनिके आश्रममें कुछ

समयतक रहे। तत्पश्चात् मुनिसे विदा लेकर सीता और

संख्या ११ ]

बतलाइये, जहाँ मैं भाई लक्ष्मण और सीतासहित निवास कर सकूँ। आप तो वनोंमें विचरण करते रहते हैं। अत: आपको यहाँके विषयमें भलीभाँति जानकारी होगी।' 

रामजीकी विनम्र वाणी सुनकर ऋषि वाल्मीकि गद्गद हो गये। वे मुसकराते हुए बोले, 'हे

'हे मुनिवर! आप त्रिकालज्ञ हैं। आपको तो ज्ञात ही

होगा कि हमें चौदह वर्ष वनवासमें व्यतीत करनेकी माता-पिताने आज्ञा दी है। आप हमें ऐसा सुरक्षित स्थान

रघुकुलशिरोमणि, आप धन्य हैं। आप सदैव मर्यादाओंका पालन करते हैं। आप सम्पूर्ण विश्वके ज्ञाता हैं।

कौन आपको जान सकता है।' सोइ जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुम्हिह तुम्हइ होइ जाई॥

तुम्हरिहि कृपाँ तुम्हिह रघुनंदन। जानिहं भगत भगत उर चंदन॥ जिसे आप चाहते हैं, वही आपको जान पाता है, आपको जानते ही वह आपका ही स्वरूप बन

बताऊँ ?

जाता है। हे राम! हे भक्तोंके हृदयको शीतल करनेवाले चन्दन! आपकी ही कृपासे भक्तलोग आपको जान

पाते हैं। आप इस समय मनुजरूपमें हैं। इसलिये मनुष्योचित व्यवहार उचित ही है। लेकिन मैं क्या

वे भी आपके मर्मको नहीं जान पाते, तब दूसरा

पूँछेहु मोहि कि रहीं कहँ मैं पूँछत सकुचाउँ। जहँ न होहु तहँ देहु किह तुम्हिहं देखावौं ठाऊँ॥

आप तो सर्वव्यापक हैं। आपको मैं कौन-सा स्थान बताऊँ ? आप ही ऐसा कोई स्थान बताइये, जहाँ आप न हों? तब मैं आपके लिये रहनेका स्थान बताऊँगा। मुनिवरकी बात सुनकर प्रभु रामके

मुखपर मुसकान खिल उठी। वे बोले, 'यह सब तो ठीक है, परंतु मुझे रहनेके लिये कोई उपयुक्त स्थान बताइये।' वाल्मीकिजीने मधुर वाणीमें कहा, 'हे रामजी! सुनिये, अब मैं वे स्थान बताता हूँ, जहाँ आप सीताजी और लक्ष्मणजीके सहित आनन्दपूर्वक निवास करें। रामजीको चौदह वर्षोंका वनवास मिला था, अत:

मुनिवरने प्रभुको चौदह ऐसे स्थान बताये, जहाँ वे सुरक्षित रूपमें रह सकते हैं।' १-जिनके कान आपकी अमृतमयी कथाओंको सुनकर कभी तृप्त नहीं होते, ऐसे भक्तोंके हृदयमें आप

निवास कीजिये। २-अपने नेत्रोंको जिन्होंने चातक बना रखा है,

जो आपके दर्शनरूपी मेघके लिये सदैव लालायित रहते हैं, ऐसे भक्तोंके हृदय आपके निवासहेतृ सुखदायी

भाग ९२ भवन हैं। देख करके सुखी होते हैं, एवं उनको विपत्तिमें देखकर ३-जिनकी जीभ आपके गुणसमूहोंका निरन्तर दुखी होते हैं, जिन्हें आप प्राणोंके समान प्यारे हैं गान करती है अथवा जो निरन्तर नाम-जपमें लीन ऐसे मानवोंके हृदय आपके रहनेयोग्य शुभ भवन हैं। रहते हैं, उनके हृदयमें प्रभु आप निवास कीजिये। ९-जिनके माता-पिता, गुरु, मित्र और स्वामी ४-जिनकी नासिका प्रभुके पवित्र और सुगन्धित सब कुछ आप ही हैं, ऐसे भक्तोंके मनरूपी मंदिरमें प्रसादरूप वायुको नित्य आदरपूर्वक ग्रहण करती है। जो सीता समेत आप दोनों भाई निवास कीजिये। आपको अर्पण करनेके पश्चात् ही भोजनको आपका १०-जो अवगुणोंको छोडकर दूसरोंके गुणोंको दिया हुआ प्रसाद समझकर ग्रहण करते हैं, जो नवीन ग्रहण करते हैं, जो ब्राह्मण और गौकी रक्षा अनेक कष्ट उठाकर करते हैं, जो हमेशा नीतिका ही पालन वस्त्रोंको धारण करनेके पूर्व प्रभुको अर्पणकर पहनते हैं, जो अत्यन्त नम्र हैं, और बड़ोंका सम्मान करते हैं, जिनके करते हैं, ऐसे लोगोंका सुन्दर मन ही आपके लिये हाथ आपके चरण-कमलोंकी पूजा करनेमें रत रहते हों, उपयुक्त आवास है। जिनको आपके सिवाय किसी अन्यपर भरोसा न हो, ११-जो गुणोंको आपका और दोषोंको अपना समझता है। जिसे सब तरहसे सिर्फ आपका ही जिनके चरण आपके तीर्थोंपर जाते हों, ऐसे भक्तोंका भरोसा है। जिसे रामभक्त प्यारे लगते हैं, ऐसे भक्तोंके हृदय आपका उत्तम निवास है। ५-जो नित्य आपके 'राम' नामरूप मन्त्रराजका हृदयमें सीतासहित आप निवास करिये। जप करते हैं, जो आपकी प्राप्तिहेतु अपने धर्मानुसार १२-जो जाति-पॉॅंति, धन, धर्म, बडाई, सुखदायक यज्ञ, हवन इत्यादि कर्मकाण्ड करते हों, जो अपने घर—सबको छोडकर केवल आपको ही हृदयमें धारण गुरुदेवका आपसे भी ज्यादा सम्मान करते हों, जो किये रहता है, ऐसे भक्तके हृदय-मंदिरमें हे प्रभु! जप, तप, यज्ञ, हवन, पूजा आदिका केवल एक ही आप विराजिये। फल चाहते हों कि आपके चरणोंमें अनन्य प्रीति हो, १३-स्वर्ग-नर्क और मोक्ष जिसकी दुष्टिमें समान ऐसे भक्तोंके मनरूपी मन्दिरमें सीताजीसहित आप निवास क्योंकि वह सब जगह केवल आपको ही धनुर्धारीरूपमें देखता है, जो मन-वचन-कर्मसे आपका कीजिये। ६-जिनके मनमें काम, क्रोध, मद, अभिमान, ही दास है, हे रामजी! उसके हृदयमें आप निवास मोह, लोभ, क्षोभ, राग, द्वेष, कपट, दम्भ और माया कीजिये। आदि कोई विकार नहीं है, उनके हृदयमें आप निवास १४-जिसे कभी भी किसी चीजकी चाह नहीं होती, जिसे आपसे स्वाभाविक प्रेम है, हे प्रभु! आप कीजिये। ७-जिनके जीवनका लक्ष्य परोपकार और सबकी उसके मनमें निरन्तर निवास कीजिये, क्योंकि वह भलाई सोचना और करना है, जो सुख-दु:ख, प्रशंसा-आपका अपना ही घर है। महर्षि वाल्मीकिने ये जो चौदह स्थान प्रभु निन्दा हर स्थितिमें सम रहते हैं। जो सोच-विचारकर प्रिय वचन बोलते हैं। जो सोते-जागते हर समय रामजीके निवासके लिये उपयुक्त बतलाये, वे वास्तवमें आपकी शरणमें रहते हैं, जिन्हें किसी अन्यका आश्रय साधकोंके लिये उपयोगी और पथ-प्रदर्शक हैं। इन्हें ही नहीं हैं; हे रामजी! आप उनके हृदयमें निवास अपने जीवनमें उतारकर हम धन्य हो जायँगे। हमारा कीजिये। जीवन प्रभुमय हो सकता है। वास्तवमें जिसके अन्दर ८-जो परायी स्त्रीको माताके समान एवं पराये प्रभुकी सच्ची चाह है, उसमें ये सभी सद्गुण, सद्विचार धनको विषके जैसा समझते हैं, जो दूसरोंके सुखको अपने-आप उतर आते हैं।

संख्या ११] भक्त नीलाम्बरदास भक्त नीलाम्बरदास संत-चरित-'भोग और भगवान्—इन दोनोंमेंसे किसका आकर्षण स्नेहमयी जननीसे बिछुड़े हुए बालककी-सी थी। जैसे अधिक है?' इस प्रश्नके उत्तरमें बहुत लोग यह कहा छोटा बालक माताको याद करता है और याद कर-करते हैं कि भोग या विषयका आकर्षण ही अधिक है। करके रोया करता है, वैसे ही नीलाम्बरदासके मनमें भी परंतु तत्त्वज्ञानी महात्माओंको इस बातमें कोई सार नहीं निरन्तर भगवान्की ही याद बनी रहती थी और वे दीखता। वे इस बातको जानते हैं कि किसी एक अज्ञात उन्हींके लिये बिलख-बिलखकर रोया करते। वे भगवान्का कारणसे मनुष्य जब अपने आस-पासकी वस्तुओंको स्मरण करते हुए जैसे बने वैसे ही शीघ्र जगन्नाथपुरी और अपनेको सर्वथा भुलाकर 'भगवान्-भगवान्' पुकारता पहुँच जाना चाहते थे। उनको दिशाका ज्ञान नहीं था, हुआ दीवानेकी तरह यथारुचि जहाँ-तहाँ विचरता है, आहार-निद्राका भी पता न था। वे आँखें मूँदे झूमते हुए उस समय इस संसारका कोई भी पदार्थ उसे अपनी ओर मनमें भगवान्का स्मरण करते आगे बढ़े चले जा रहे थे। आकर्षित नहीं कर सकता। इस प्रकार आत्मभावको एक सच्चे प्रेमीका अपने प्रेमास्पदसे मिलनेके लिये ऐसा भुला देनेकी भगवान्में शक्ति है, इसीसे तो उनको ही दीवानापन हुआ करता है। नीलाम्बरदासके गाँवसे 'भुवन–मोहन' कहते हैं। जो सौभाग्यसे उनके आकर्षणसे श्रीजगन्नाथपुरी समीप न थी। कहाँ तो अत्यन्त उत्तर खिंच जाते हैं, उन्हींको उनके प्रभावका पता लगता है। इनका घर और कहाँ दक्षिणमें पुरी, परंतु इन्हें चलते भक्त नीलाम्बरदास ऐसे ही भगवद्भक्तोंमेंसे एक थे। रहनेके सिवा और किसी बातकी भी सुधि न थी। इस तरह वे बहुत-से वन-पर्वत, नदी-नाले, निर्जन-जल उनके अहोभाग्यकी सीमा नहीं थी। वे उन 'भुवनमोहन'-की मोहनीसे उनकी ओर खिंच गये थे और उनके शुन्यस्थलों और बीहड वनोंको लाँघते हुए गंगाजीके प्रभावको भी जान गये थे। नीलाम्बरदास सब तरहसे तटपर आ पहुँचे। वर्षा ऋतु थी, गंगाजीमें बाढ आ रही सुखी थे—उनके स्त्री, पुत्र, धन, पूरा परिवार था तथा थी, कहीं कोई किनारा नहीं दीखता था। गंगाजीकी मान-प्रतिष्ठा आदि सब कुछ था। परंतु जिस क्षणसे वे उछलती हुई तरंगोंकी ओर देखनेकी भी हिम्मत नहीं उस मोहन-मन्त्रसे आकर्षित होकर भगवानुके आकर्षणमें होती थी, देखते ही हृदय भयसे काँप उठता था। पड़े, उसी क्षणसे इन सारी वस्तुओंके बन्धन ढीले पड़ नीलाम्बरदासको नदीके उस पार जाना था। नौकाके गये। वे अपनेको स्त्री-पुत्र, धन-मान आदि मायाके बिना पार जाना असम्भव था, पर नौका कहीं देखनेको बन्धनोंसे बँधे हुए और उनके संगमें रहकर अपने भी नहीं थी। नीलाम्बरदास मन-ही-मन बहुत घबराये। जीवनको व्यर्थ बीतता हुआ समझने लगे। उनके मनमें उस समय उनके दु:खका पार नहीं था। वे अनेक गाँवों यह विचार बारम्बार आने लगा। अन्तमें उन्होंने सब और वनोंको लाँघकर चले आ रहे थे। शरीर खूब थक कुछ त्यागकर घरसे चले जानेका निश्चय कर लिया। गया था, सूर्यदेव अस्ताचलको जाना चाहते थे। इससे नीलाम्बरदासका यह निश्चय कंगालके मनोरथकी पूर्व ही उस पार पहुँचना आवश्यक था, परंतु वे जिस भाँति केवल मनमें ही उत्पन्न होकर वहीं लय नहीं हो स्थानपर खड़े थे, वहाँ बस्तीका होना तो दूर रहा, गया। इस निश्चयने उनको सच्चा विषय-विरागी और मनुष्यकी गन्धतक भी नहीं थी। ऐसे निर्जन स्थानमें घाट संसार-त्यागी बना दिया। अहा! ऐसा न हो तो कितनी दूर है, इस बातको वे किससे पूछते? ऐसी भगवान्के आकर्षणका प्रभाव ही क्या है? स्थितिमें श्रीहरिके स्मरणके सिवा और कोई आधार न नीलाम्बरदासने घर छोडकर व्याकुल-चित्तसे था। नीलाम्बरदास भगवानुका भजन करने लगे। श्रीजगन्नाथजीका रास्ता लिया। वे भगवान्के दर्शन भजन करते-करते कुछ समय बीत गया, इतनेमें ही करनेके लिये बहुत ही व्याकुल थे। उनकी स्थिति एक मछुआ नदीमें जाल फेंककर मछली पकडता हुआ

भाग ९२ अपनी नौकासहित वहाँ आ पहुँचा। उसे देखकर रहे हैं, दिन रहते-रहते किनारे पहुँच जाना अच्छा है, नीलाम्बरदासको बड़ा आनन्द हुआ। वे भगवान्को इसलिये नौकाको किनारेकी ओर ले चलो।' धन्यवाद देने लगे और नाववालेको पुकारकर कहने परंतु उनकी बात कौन सुनने लगा? मछुएके मनमें लगे—'भाई! कृपा करके नावको जरा इस ओर ले आ तो दूसरी ही बात थी, अतएव उसने नौकाको नदीके बीचमें चलाना जारी रखा। नीलाम्बरदासजीकी बातोंके और इस विपत्तिमें पड़े हुए ब्राह्मणको उस पार उतारकर उपकार कर। पैसेके लिये मत घबरा। पार पहुँचाकर तू जवाबमें उसने मुसकराकर मुँह फेर लिया। मछुएका यह जो माँगेगा, वह तुझे अवश्य दे दिया जायगा।' भाव देखकर नीलाम्बरदास उसके कुविचारको तुरंत ही नीलाम्बरदासकी आवाज सुनकर मछुएने नाव ताड़ गये। एक बार तो वे कुछ घबराये; परंतु ऐसे समय किनारेकी ओर मोड़ दी और मीठा-मीठा बोलकर नीलाम्बर-घबराना अच्छा नहीं, यह सोचकर उन्होंने ईश्वरपर दासको नौकामें बैठा लिया। नावपर चढ़ते ही नीलाम्बरदासके भरोसाकर साहसके साथ कहा—'भाई! आखिर तेरा आनन्दका पार न रहा। वे मन-ही-मन भगवान्को असंख्य क्या अभिप्राय है ? क्या तू मुझे मार डालना चाहता है ? धन्यवाद देने लगे। इधर ब्राह्मणको नावमें बैठाकर मछुआ अच्छी बात है, मैं भी देखूँगा, तू मुझे कैसे मारता है?' नीलाम्बरदासके वचन सुनकर मछुएने जोरसे हँसकर भी बहुत ख़ुश हुआ और वह भी मन-ही-मन भगवान्को धन्यवाद देने लगा, परंतु दोनोंके धन्यवादके कारणोंमें बड़ा गम्भीर स्वरमें कहा—'ओहो! तुम तो बड़े मिजाजी अन्तर था। नीलाम्बरदास भगवान्के शीघ्र दर्शन पानेके मालूम होते हो, अब तुम्हारा काल समीप आ पहुँचा है। लिये तड़प रहे थे। इस विषम स्थितिमें भगवान्ने नाव बस, जरा-सी देर है। लो, अब तुम्हें जिसको याद करना भेजकर गंगाके उस पार पहुँचानेका प्रबन्ध कर दिया, वे हो, कर लो, तुमको मैं अभी नीलाचल पहुँचा देता हूँ। इस बातके लिये भगवानुको धन्यवाद दे रहे थे। इधर नीलाम्बरदासने मछुएके वचन सुने, वे शंकासे कुछ मछुआ एक असहाय, निर्बल मनुष्यको पंजेमें फँसा हुआ घबराये भी। पर यह घबराहट मरनेके लिये न थी। वह शिकार समझकर ईश्वरका उपकार मान रहा था। उसने थी भगवान्के दर्शन होनेसे पहले ही मर जानेकी। वे नीलाम्बरदासको नदीके बीचमें ले जाकर मार डालने और एकान्तचित्तसे निराधारके आधार और निर्बलके बल उनके पास जो कुछ था, उसे छीन लेनेका विचार कर भगवानुका स्मरण करने लगे—'भगवन्! दीनदयालु! लिया था। इसीसे वह मन-ही-मन फूला न समा रहा था। मेरी रक्षा करो, रक्षा करो। तुमने पहले कितने शरणागतोंके दु:ख दूर किये हैं, आज तुम अपनी शरणमें पड़े हुए इस बेचारे मूर्ख मछुएको यह पता न था कि नीलाम्बरदासका जीवन-धन, उनका सर्वस्व उनके कन्धेकी ब्राह्मणके भी दु:खको दूर कर दो। अपनी दयारूपी झोलीमें नहीं, अपितु हृदयकी ऐसी गृढ़ पिटारीमें था, नौकाके द्वारा इस विपत्ति-सागरमें पडे हुएको बचा लो! जहाँसे उसे कोई भी लूट नहीं सकता था। उस बेचारेको प्रभो! एक बार दर्शन देनेके बाद फिर भले ही जो कुछ नीलाम्बरदासकी स्थितिका पता कैसे होता? वह तो उन्हें हो, परंतु इससे पहले कुछ न होने दो।' रुपयेकी थैली साथ लिये घूमनेवाला साधारण मुसाफिर भक्तभावन भगवान्ने तुरंत ही आर्त भक्तकी पुकार समझकर ही उन्हें मारकर धन लूटनेकी इच्छासे नावको सुनी। ब्राह्मणके अन्तरका दु:ख जानकर उसी समय भगवान् नदीके बीचमें ले जानेकी ताकमें था। मछुएको किनारेसे एक नौजवान राजपूत वीरके स्वरूपमें गंगाके किनारे प्रकट हटकर दूसरी ही ओर जाते देखकर नीलाम्बरदासने होकर ऊँचे स्वरसे मछुएको पुकारकर कहने लगे—'अरे ओ मछुऐ! इधर आ, यदि जीवनकी आशा रखता हो कहा—'भाई! तू बडा साहसी आदमी मालूम होता है, नहीं तो ऐसे तुफानमें नदीके अन्दर नाव लानेकी हिम्मत तो तुरंत इधर चला आ, नावको तुरंत किनारे लगा।' भर्ति। प्रमां इसरे संइता है। इस्तु र्वार्गं प्राह्मं (स्विह् विद्वारी dharma स्वया क्रिक्त प्राह्मि के देश क्रिक्त स्वया प्राह्म के दिन

संख्या ११ ] भक्त नील	गम्बरदास ३५
******************************	**********************************
न थी, उसे सुनते ही मछुआ अस्त-व्यस्त-सा हो गया।	मौतके मुखसे बचाया है। अतएव मैं तुम्हारा उपकार
भयसे उसका शरीर थर-थर कॉॅंपने लगा, नाव चलाना	मानता हूँ। मेरा मन इस समय भगवान् श्रीजगन्नाथजीके
कठिन हो गया। फिर भी वह सुनी-अनसुनी करके धीरे-	दर्शनोंके लिये व्याकुल हो रहा है, इसीलिये मैं सब कुछ
धीरे नाव चलाता ही रहा। भगवान्ने पुन: पुकारकर	छोड़-छाड़कर निकल पड़ा हूँ। अतएव दया करके मुझे
कहा; परंतु जब उसने इस बार भी न सुना तो अन्तमें	गंगाजीके उस पार जानेका रास्ता बतला दो, जिससे कि
एक सरसराता हुआ बाण आकर उसकी नौकामें लगा।	मैं अपने प्राणवल्लभ श्रीनीलाचलनाथके दर्शन कर सकूँ।'
धनुषकी टंकारसे मछुआ घबड़ा गया और बाणके दिव्य	नीलाम्बरदासके वचन सुनकर क्षत्रियरूपधारी
प्रकाशसे उसकी आँखें मानो जलने लगीं। वह मन-ही-	भगवान्ने कहा—'ब्राह्मण! जब तुमने श्रीजगन्नाथजीके
मन विचार करने लगा, 'अब क्या होगा ? यदि ब्राह्मणने	दर्शन करनेके लिये ही घर छोड़ा है तो तुम्हारी इच्छा
उससे सारा हाल कह दिया, तब तो वह मेरा काम तमाम	पूरी हुए बिना नहीं रह सकती। सारे जगत्के नाथ
ही कर डालेगा, परंतु नाव किनारे न ले जानेमें भी बचाव	भगवान् जगन्नाथ ही तुम्हारी सहायता करेंगे। इस क्षुद्र
नहीं है। वह बाणसे तुरंत मार डालेगा।'	नदीके पार जानेकी तो बात ही क्या है, भवसागरको
इस प्रकार विचार करते-करते मछुएने नौकाका	लाँघ जानेका भी अधिकार तुमने पा लिया है।'
मुख किनारेकी ओर घुमाया और वहाँ पहुँचकर वीर	नीलाम्बरदासको आश्वासन देनेके बाद भगवान्ने
राजपूतके चरणोंमें लोट गया। नीलाम्बरदास यह देख-	मछुएसे कहा—'मुर्देकी तरह यहाँ पड़े रहनेसे कुछ नहीं
सुनकर स्तब्ध रह गये। उन्हें पता ही न रहा कि यह	होगा; उठ, इस ब्राह्मणको तुरंत उस पार पहुँचा दे। अभी
स्वप्न है या सत्य! तदनन्तर उस मायावी क्षत्रिय वीरने	मेरे देखते-देखते इनको पहुँचाकर आ, नहीं तो इन
गुस्सेमें भरकर मछुएको फटकारते हुए कहा—'दुष्ट! मैं	धनुष-बाणोंको देखता है न? उठ, जल्दी खड़ा हो।'
सदा सर्वदा यहाँ घूमकर चौकसी किया करता हूँ और	क्षत्रिय-वेशधारी भगवान्के मुखसे इन वचनोंको
तुझ-सरीखे लुटेरोंको पकड़ता हूँ। बता, इस समय मैं तेरा	सुनकर अब मछुएके प्राण मानो लौट आये। वह एकदम
सिर उड़ा दूँ तो तुझे कौन बचायेगा?'	उठकर भगवान्को प्रणाम करने लगा और अपने
क्षत्रियरूपधारी भगवान्के लीला-वचन सुनकर	अपराधके लिये क्षमा माँगने लगा। अन्तमें नीलाम्बरदासको
मछुएके मानो प्राण ही निकलने लगे। वह मूर्छित-सा	नावमें बैठाकर उसने नाव चलायी। अब मछुएका मन
उनके चरणोंमें पड़ा रहा। तब भगवान् शान्त होकर नम्र	सर्वथा पलट गया था। उसके मनमें किसी तरहका
स्वरसे नीलाम्बरदाससे कहने लगे—'ब्राह्मणदेव! तुम	दुर्विचार न था। उसके मुखसे अब कोई कटु वचन भी
इस नौकासे उतर जाओ। जानते हो, मैं कौन हूँ ? मैं इस	न निकले। भगवान्के दर्शन होनेसे उसके अवगुण
प्रदेशके महाराजका सेवक हूँ और इस किनारेकी तथा	सद्गुणोंके रूपमें बदल गये और इसलिये अब वह श्रीहरिके
उपवनकी रक्षा करता हूँ। महाराजने इसीलिये मुझे रख	पवित्र नामका गान करता हुआ नाव खे रहा था।
छोड़ा है। जो इस वनमें किसीको सताता है, मुसाफिरोंको	देखते–ही–देखते नौका गंगाजीके उस किनारेपर
लूटता है और धन छीनकर उन्हें मार डालता है, उसे	जा लगी। नीलाम्बरदास उतर पड़े। उधर भगवान् भी
मैं उचित दण्ड दिया करता हूँ। इसीलिये मैंने इस वेशमें	अन्तर्धान हो गये। मछुएके मनमें अपने कुकृत्यके लिये
यह धनुष-बाण धारण कर रखा है।'	बड़ा पश्चाताप था। वह नीलाम्बरदासके चरणोंमें
क्षत्रिय-रूपधारी भगवान्के वचन सुनकर	लेटकर क्षमा माँगने लगा। नीलाम्बरदास प्रसन्नतासे उसे
नीलाम्बरदास कहने लगे—'भाई! आज मेरे बड़े भाग्य	आशीर्वाद देकर आगे बढ़े। अनेक गाँवों, शहरों, पहाड़ों,
थे, जो मैं तुम्हारा दर्शन कर सका। तुमने ही आज मुझे	जंगलों और नदी–नालोंको पार करते हुए कुछ दिनों बाद

दैवयोगसे उसी दिन रथयात्रा थी, सारी पुरीमें आनन्द नीलाम्बरदासने श्रीजगन्नाथजीमें तन्मय होकर अपने और उत्साह छाया हुआ था। 'हरि-हरि' और 'जय-मनकी बात प्रभुसे कही। भक्त और भक्तभावन भगवान्की जय' के घनघोर घोषसे आकाश भर गया था। वाद्योंकी चार आँखें होते ही कुछ बातचीत हो गयी और देखते-ध्वनि और भक्त-मण्डलियोंके अमृतमय मधुर कर्णप्रिय ही-देखते भक्त नीलाम्बरदास श्रीजगन्नाथप्रभुके रथके संकीर्तनके स्वरोंसे सारा वातावरण व्याप्त था। नृत्य-कीर्तन सामने गिर पडे। उन्हें गिरते देखकर सेवकगण उनके तो कभी थमता ही न था। जिधर कान जाते थे उधर ही पास दौड़े गये, परंतु उन्होंने जाकर देखा कि उनके शरीरसे प्राण-पखेरू उड गये हैं। जो पक्षी क्षणभर पहले आनन्द-कोलाहल सुनायी पडता और जिस ओर नेत्र जाते 'हरे कृष्ण राम राम, हरे कृष्ण राम राम' की ध्वनि कर थे, उसी ओर आनन्दोल्लासके दृश्य दिखायी पड़ते थे। श्रीबलराम, श्रीसुभद्रा और श्रीजगन्नाथजी—तीनों पृथक्-रहा था, वह बोलता-बोलता ही न मालूम कहाँ उड़ गया। अवश्य ही भगवान्के परमधाममें पहुँचा होगा। पृथक् उत्तम रथोंमें विराजित थे। भक्तगण बडे आनन्दसे रथ खींच रहे थे और गम्भीर गर्जनाके साथ तीनों रथ चल नीलाम्बरदासकी मुक्तिका समाचार सब ओर फैल रहे थे। आनन्दके आवेशसे कुछ लोग ताली बजा-बजाकर गया। उनके मरणवृत्तान्तको सुनकर सभी आश्चर्य-कृद रहे थे, कुछ आँसुओंकी वर्षा कर रहे थे तो कुछ जडवत् चिकत होकर ऐसे दुर्लभ निधनकी प्रशंसा करने लगे। निश्चेष्ट हो गये थे। इसी समय नीलाम्बरदास रथके पास अहा! भक्तकी कैसी अपार महिमा है! उनकी मृत्यु आ पहुँचे। उनके आनन्दका पार न था, आनन्दके आँसू भी इस मृत्युलोकमें अमर होकर रहती है। आज भी उनके उनके नेत्रोंसे अविराम बह रहे थे। दीर्घकालतक यात्रा मरणकी जय-घोषणा श्रीजगन्नाथपुरीमें जगह-जगह

यही महिमा है।

िभाग ९२

भगवद्गुण-महिमा

करके उन्होंने रास्तेमें भृख-प्यास, सरदी-गर्मीके तथा अन्य

अनेक प्रकारके विघ्न और क्लेश सहे थे, वे सब यहाँ

आनेपर सर्वथा भूल गये। प्रेमाश्रुओंके पवित्र अभिषेककी

वे श्रीजगन्नाथपुरीमें पहँचे।

सुननेमें आती है। किंतु भक्त तो कभी मरता नहीं। भक्त

नीलाम्बरदास आज भी भगवद्भक्तिकी धारामें अवगाहन करते जा रहे हैं। ठीक ही है—'न मे भक्त: प्रणश्यित।'

एकान्तलाभं वचसो नु पुंसां सुश्लोकमौलेर्गुणवादमाहुः। पुनस्तच्चरणारविन्दपरागसेवारतिरात्मलब्धा॥ कुत:

श्रुतेश्च विद्वद्भिरुपाकृतायां कथासुधायामुपसम्प्रयोगम्।। (श्रीमद्भा० ३।७।१२-१४)

(श्रीमद्भा० ३।६।३७) निष्कामभावसे धर्मोंका आचरण करनेपर भगवत्कृपासे

महापुरुषोंका मत है कि पुण्यश्लोकशिरोमणि श्रीहरिके प्राप्त हुए भक्तियोगके द्वारा यह (देहाभिमानी जीवमें ही

गुणोंका गान करना ही मनुष्योंकी वाणीका तथा विद्वानोंके देहके मिथ्याधर्मोंकी) प्रतीति धीरे-धीरे निवृत्त हो जाती

मुखसे भगवत्कथामृतका पान करना ही उनके कानोंका है। जिस समय समस्त इन्द्रियाँ विषयोंसे हटकर साक्षी सबसे बड़ा लाभ है। परमात्मा श्रीहरिमें निश्चलभावसे स्थित हो जाती हैं, उस

समय गाढ़ निद्रामें सोये हुए मनुष्यके समान जीवके राग-स वै निवृत्तिधर्मेण वासुदेवानुकम्पया।

द्वेषादि सारे क्लेश सर्वथा नष्ट हो जाते हैं। श्रीकृष्णके भगवद्धक्तियोगेन शनैरिह ॥ तिरोधत्ते

गुणोंका वर्णन और श्रवण अशेष दु:खराशिको शान्त कर यदेन्द्रियोपरामोऽथ द्रष्ट्रात्मनि परे हरौ।

देता है: फिर यदि हमारे हृदयमें उनके चरण-कमलकी विलीयन्ते तदा क्लेशाः संसुप्तस्येव कृत्स्नशः॥

रजके सेवनका प्रेम जाग जाय, तब तो कहना ही क्या है। अशेषसंक्लेशशमं विधत्ते गुणानुवादश्रवणं मुरारेः।

संख्या ११ ] संत-संस्मरण संत-संस्मरण ( परमपूज्य देवाचार्य श्रीराजेन्द्रदासजी महाराजके गीताभवन, ऋषिकेशमें हुए प्रवचनसे साभार ) 🕯 भक्तमालीजी महाराज अत्यन्त अनिकेत और करते थे—'कार्यं कारुण्यमार्येण न कश्चित् नापराध्यति।' भूल सबसे हो सकती है। १९९०-९१ के अमानी संत थे। कोई संग्रह नहीं, सुदामा कुटीमें अपने आसपासकी बात है। एक मुसलिम कम्पोजीटर कुछ पुस्तकालयमें एक चटाई जमीनपर बिछाकर सोते थे। पुस्तकें चारों ओर रहती थीं, कहते—'पुस्तकेषु काम माँगने आ गया। उसे भक्तमालके एक खण्डकी कम्पोजिंगहेतु अग्रिम राशि भी दे दी गयी। कुछ दिनों वसाम्यहम्।' एक भक्त महिला सोमानीबाईको उनकी यह रहनी पसन्द नहीं थी। उन्होंने महाराजजीसे पूछे बाद उसने काम बन्द कर दिया और आया भी नहीं; बिना एक चौकी लाकर पुस्तकालयमें रखवा दी, जिससे बुलानेपर आकर उसने उद्दण्डतापूर्वक अग्रिम राशि महाराज उसपर सो सकें। महाराजजीने जब चौकी देखी लेनेकी बातसे साफ इनकार कर दिया। महाराजजीने जाते समय स्थितप्रज्ञ भावसे उससे कहा कि प्रसाद तो तो प्रसन्ततापूर्वक आज्ञा दी कि वेद भगवान बाहर बरामदेमें रखे हैं, उन्हें आदरपूर्वक यहाँ लाकर चौकीपर लेते जाओ। उसके जानेपर बोले कि अपनी भूलसे विराजमान करा दो। भक्त महिलाका मन रखनेको यह नुकसान हुआ है तो हम स्वयं ही उपाय करेंगे। कुछ भी कह दिया कि चौकीपर मेरे तो गिरनेका भय रहेगा। महीनों बाद वह फटेहालमें महाराजजीके पास आकर यह भक्तवत्सलता और निरपेक्ष सहजताका अनुपम क्षमा माँगने लगा और रोने लगा कि खानेको कुछ नहीं उदाहरण है। है। कुछ रुपये जो पासमें थे, उसे दे दिये, कुछ काम 🔹 महाराजजीमें क्षमा और उदारता भी अपरिमित भी बता दिया। मात्रामें दिखायी देती थी। सुदामा कुटीमें कथा हो रही 🕯 भिण्ड जिलेमें विजयरामदासजी महाराज बड़े थी। पुस्तकोंकी बिक्रीके कुछ रुपये लकडीकी आलमारीमें विद्वान्, विनम्र और निरपेक्ष संत थे। बडे-बडे महापुरुष रखे हुए थे। एक विद्यार्थी जिसे इस बातकी जानकारी उनके पास सत्संगहेतु आते थे। एक बार वे खाक थी, उसने आलमारीका ताला तोडकर रुपये चुरा लिये। चौक, वृन्दावनमें पधारे। कथा चल रही थी, सो जूते-रात्रिमें महाराजजी कमरेमें आये तब किसीने अलमारीकी चप्पलोंके पास चुप-चाप बैठकर कथा सुनते रहे। ओर देखकर ताला टूटने और चोरीकी शंका व्यक्त की। कहते थे-कभी भीड़की परवाह मत करना। एक बार महाराजजी तत्काल बोल उठे-रुद्र भगवान्की लीला हो अस्वस्थ हुए तो ग्वालियरके बड़े अस्पतालमें इलाजहेतु गयी, तालेकी आयु समाप्त हो गयी। इसमें क्या विचार लाये गये। वहीं सत्संग होने लगा। एक डॉक्टरने करना है। अपनी ओरसे नुकसानकी भरपायी करी। बार-कहा—महाराजजी. हमें ऑपरेशनमें किसी मरीजके बार उस विद्यार्थीको यादकर कहते—उसने पढ़ना क्यों सीनेमें आजतक परमात्मा नहीं दीखा। महाराजजी छोड दिया? दो-तीन वर्ष बाद वह लडका मरणासन्न बोले, हम तो मरीज हैं। तुम कहते हो हमारे रक्तमें कीटाणु बढ़ गये हैं। हमें तो नहीं दीखते। डॉक्टरने स्थितिमें आया और बार-बार क्षमा माँगने लगा। महाराजजीने उसकी चिकित्सा करायी, कपडे दिये और कहा कि सूक्ष्मदर्शी यन्त्रसे दीखेंगे, ऐसे नहीं। महाराजजी कहा कि माता-पिताकी सेवा करो। बीती बातकी ग्लानि बोल उठे-फिर जो अणोरणीयान् परमात्मा है, वह मत करना, आते-जाते रहना। यह परदु:खकातरता बिना राम-वीक्षण यन्त्रके कैसे दीखेगा? कुछ कालके पश्चात् वह डॉक्टर सहयोगियोंसे कहता था कि अब संतका स्वभाव है। 比 वे वाल्मीकि-रामायणका प्रसंग यादकर कहा मरीजमें मुझे भगवान् दीखने लगे।—प्रेम

ईश्वर और उनके अवतार

## ( ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज )

अन्तरिक्षमें भ्रमण करते हैं तो उनका कोई नियन्ता तो अजन्मा, आदि-अन्तरहित, सर्वव्यापी, सर्व-

सामर्थ्यवान्, अद्वितीय परम सत्ता, जिसकी अनन्त होगा! विभूतियोंका वर्णन करना किसीके लिये सम्भव नहीं है,

उसीको हम लोग ईश्वर, प्रभु, भगवान् आदि अनेक

नामोंसे पुकारते हैं। समस्त सृष्टि उन्हींमें स्थित है, अपनी

ही इच्छामात्रसे वे ही स्वयं इस रूपमें प्रकट हुए हैं। वे

परम चैतन्य हैं, आनन्दस्वरूप हैं और वे ही एकमात्र

सत्य हैं। उनके अतिरिक्त कोई और सत्ता है ही नहीं। वे ही अपनी मौजमें अनेक रूप धारण करते हैं। स्थूल,

सूक्ष्म, दृश्य और अदृश्य जो कुछ भी है, वे ही हैं। वे निर्गुण-निराकार हैं और अपने व्यक्त रूपमें

सगुण-साकार भी हैं। इसे समझनेके लिये सर्वप्रथम तो उनकी सत्ताको स्वीकार करना होगा कि ईश्वर हैं और वे ही हैं, अन्य कुछ भी नहीं है। वस्तुत: ईश्वरको केवल

माना ही जा सकता है, जाना नहीं जा सकता। क्यों? क्योंकि हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ सीमित हैं और वे ही असीम हैं। 'स्व'द्वारा उनकी विद्यमानताका अनुभव किया जा सकता

है। इसलिये विवाद और जिद्दको छोड़कर वेद-वाणी, सन्त-वाणी, गुरु-वाणीमें सुने हुए प्रभुकी सत्ता और नित्य

विद्यमानताको उसी प्रकार मान लेना चाहिये, जिस प्रकार अनेक बातोंको, जिनकी हमें व्यक्तिगत जानकारी नहीं होती है, फिर भी हम उन्हें सत्यके रूपमें मानते हैं।

यह सब कहने-सुननेके पश्चात् भी कुछ लोग ऐसे होते हैं, जो अपने हठपर अड़े रहते हैं और कहते हैं कि

यह सारा ब्रह्माण्ड, दृश्य-जगत् सभी कुछ अपने-आप बन गया। ऐसे लोग परम चैतन्य सत्ताके अस्तित्वको, हम लोगोंके चैतन्यका उनसे जुड़ जाने आदिको माननेको

तैयार ही नहीं हैं। रंग-बिरंगे उत्कृष्ट डिजाइनके मोरके

सुन्दर पंखोंपर दृष्टि जाती है, फूलोंमें रंगका कलात्मक मिश्रण देखते हैं, पिक्षयोंके विभिन्न स्वरूप और उनके अपने-अपने ढंगके स्वरोंको सुनते हैं तो यह भाव क्यों

नहीं उपजता कि इसके पीछे किसीकी कारीगरी अवश्य

होनीं pdyligm ग्रेह्। इन्द्रार्व, Satver क्रिक्स प्रकृति के प्रकृति के अभि प्रमास के अभि प्रकृति के Avinash/Sha

इसी प्रकारके हठी एक वैज्ञानिक और उसके एक वैज्ञानिक मित्रमें इसी विषयको लेकर विवाद था। वह हठी अपने मित्रकी बात किसी भी प्रकार माननेको तैयार

नहीं था कि किसी परमसत्ताद्वारा पूरी सृष्टिकी रचना हुई। वह इस बातपर अड़ा था कि यह सब अपने-आप बन गया। कुछ समय पश्चात् मित्र वैज्ञानिकने एक बहुत

ही बढ़िया, उत्कृष्ट यन्त्र बनाया। उस हठी वैज्ञानिकने जब उसे देखा तो बहुत प्रभावित हुआ और पूछा कि इसे किसने बनाया? उसके बार-बार पूछनेपर भी मित्र

यही कहता रहा कि यह अपने-आप बन गया और दूसरा कहता रहा कि अपने-आप कैसे बन सकता है? अन्तमें मित्रने कहा कि भाई, जब यह छोटा-सा यन्त्र अपने-आप नहीं बन सकता तो इतनी बडी सुष्टि अपने-

आप कैसे बन सकती है? यदि हम अपनी बुद्धिपर ताला न लगायें और शान्त भावसे इस बातको समझें और स्वीकार करें कि एक परम सत्ता है, जो आदि-अन्तरहित, सर्वव्यापी और

सर्वसमर्थ है और वही इस सृष्टिका निर्माता और पालनकर्ता है और उसके अतिरिक्त कोई और सत्ता है ही नहीं, तो फिर सर्वत्र उसीकी विद्यमानता दिखायी पड़ेगी और सब कुछ उन्हींका रूप मालूम पड़ेगा। जब

सभी कुछ उन्हींका रूप है अर्थात् वे ही अव्यक्त व्यक्त हुए हैं तो सब कुछ उनका अवतार ही तो है। परंतु प्रचलित मान्यतामें अवतार उनके उन्हीं

स्वरूपोंको कहते हैं, जिनमें समय-समयपर वे विशेष रूपोंमें प्रकट हुए हैं। उनके कुछ अवतार तो किसी परिस्थितिविशेषमें किसी तात्कालिक उद्देश्यकी पूर्तिहेत्

िभाग ९२

हुए हैं; जैसे वाराह, नृसिंह, कच्छप, वामन आदि; और कुछ अवतार जैसे-राम, कृष्ण दीर्घकालिक हुए, जिसमें उन्होंने दुष्टोंका संहार किया, भक्तों, धर्मात्मा लोगोंकी

ईश्वर और उनके अवतार संख्या ११ ] हुए तो बहुत-बहुत वर्ष बीत गये, प्रेम-रसके आदान-कुछ शंकालु लोग यह प्रश्न करते हैं कि वह परब्रह्म स्वयं मनुष्यरूप कैसे धारण कर सकता है? प्रदानके लिये उन्होंने फिर क्यों नहीं अवतार लिया? सोचनेकी बात है, जब वह अपनेहीको अनेक-अनेक ऐसा लगता है कि उन्होंने सोचा होगा कि बार-बार रूपोंमें व्यक्त कर सकता है तो वह स्वयं मनुष्यरूप अवतार लेनेका झंझट कौन करे, उसी अवतारको नित्य धारण करनेमें क्यों नहीं समर्थ हो सकता? कर दें। वैसे तो सभी मनुष्योंमें वे ही हैं, परंतु उनके अतः भगवान्का श्रीकृष्ण-अवतार नित्य है। उनका अवतारी मनुष्यरूप और सामान्य मनुष्योंमें एक अन्तर लीला-धाम उनके माता-पिता, उनके सखा और सिखयाँ है। उनकी ही बनायी हुई माया, उनकी चेरी है, अत: सब चिन्मय प्रेम-रससे ही बने हुए थे। उनमें कोई भी भौतिक वस्तु नहीं थी। भगवान्के प्रेमी भक्तोंमें भौतिक जब वह मनुष्यरूप अथवा कोई अन्य साकाररूप धारण भाव नहीं रहता। भगवान्के प्रेमी भक्तोंका आज भी करते हैं, तब वह उन्हें आच्छादित नहीं कर सकती। इसलिये वे अपने शुद्ध वास्तविक स्वरूपमें समस्त उनकी दिव्य लीलामें प्रवेश होता है और वे उनके प्रेम-दिव्यताओंसहित साकार रूपमें प्रकट होते हैं, परंतु रसका आस्वादन करते रहते हैं। यदि भगवानुका अवतार सामान्य मनुष्य उनकी उस मायासे आच्छादित रहते हैं। नहीं होता तो इस रसकी पूर्ति नहीं हो सकती थी। मनुष्यको जब अपनी साधना और प्रभु-कृपासे मायाके 'जिनको यह विश्वास नहीं है कि भगवान् अवतार जालसे निकलकर अपने मूल स्वरूपका बोध हो जाता लेते हैं, उनसे मेरा कोई आग्रह नहीं है कि वे है, तभी 'अहं ब्रह्मास्मि' या 'शिवोऽहम्' कहनेकी अवतारवादको जबरदस्ती मानें तथा उनके न माननेपर कोई आश्चर्य भी नहीं है, क्योंकि अपनी-अपनी स्थिति बनती है। भगवानुको अवतार लेना पड़े—ऐसी बात भगवानुमें मान्यताके लिये सभी स्वतन्त्र हैं। परंतु अन्तमें फिर भी निवेदन है कि बिना प्रेम-रसके जीवन नीरस और शुष्क नहीं होती है; क्योंकि भगवान् सर्वांशपूर्ण, सर्वशक्तिमान् और स्वतन्त्र हैं। फिर भी भगवदवतारके शास्त्रोंमें तीन रहता है। और प्रेम उसीसे किया जा सकता है, जो नित्य हेत् बतलाये गये हैं-हो। नित्य केवल ईश्वर ही हैं। इसलिये एक बार उनके (१) साधुओंका परित्राण, (२) दुष्टोंका विनाश अवतारको मान तो लें, माननेमें कोई घाटा नहीं होगा। प्रेम-रसका आदान-प्रदान उनके साकार अवतारी रूपोंमें और (३) धर्मकी स्थापना। इनमें दुष्टोंका विनाश और धर्मकी स्थापना तो ही सहज है। प्रेम-रस किसे नहीं भायेगा, चाहे भक्त हो भगवान् बिना अवतार लिये भी कर सकते हैं। यदि वे चाहे भगवान् हों। दोनों भगवान्के अवतारमें खास कारण होते, तो इस यह ध्यान देनेकी बात है कि ईश्वरके साकाररूपमें समय भी भगवानुका अवतार होना चाहिये था। क्या उनसे आत्मीय सम्बन्ध जोड़ना आसानीसे बन जाता है। धर्मका ह्यास इस समय कम है ? और दुष्टोंकी कमी नहीं मीराने उन्हें पित माना, किसीने उन्हें अपना सखा माना, है, परंतु उनकी लीलापर विचार करनेपर मालूम होता है किसीने पुत्र माना, तो किसीने पिता या भाई माना। उनके कि भगवान्का अवतार अपनी रसमयी लीलाद्वारा भक्तोंको देवीरूपमें लोगोंने उनसे माँका सम्बन्ध जोड़ा। रस प्रदान करनेके लिये और स्वयं उनके प्रेमका रस अतः अवतारवादके विवादमें न पड़कर सरल लेनेके लिये ही होता है। धर्मकी स्थापना और दुष्टोंका भावसे उनके किसी अवतारीरूपको स्वीकार करके विनाश तो उसका अनुषांगिक कार्य है। उसमें भी आत्मीय सम्बन्ध जो भी पसन्द हो, जोड़कर उनके प्रकारान्तरसे साधुओंका हित भरा रहता है। सान्निध्य और अन्तरंगताका अनुभव करें। उसमें कोई घाटा नहीं है, फायदा-ही-फायदा है। यह प्रश्न करना स्वाभाविक है कि कृष्णावतारको

खेतीमें अमृतपानीका विशेष लाभ (वैद्य श्रीमती नन्दिनीजी भोजराज, एम०डी० (आयुर्वेद)) वर्षाऋतुका अवसान हो गया है। कहीं खेतोंमें 🔹 गोमूत्र जमा करके रखनेहेतु धातुका बर्तन कभी

बोवाईकी तैयारियाँ हो रही हैं तो कहीं बोवाई पूर्ण हो भी उपयोगमें नहीं लेना चाहिये। धातुके बर्तनमें गोमूत्र

रही है। रबीकी फसलकी कटाई हो जानेपर खेत प्राय: खाली हो जाते हैं। ऐसेमें पशुपालक और किसान अपने

पशुओंको उन खाली खेतोंमें चरनेके लिये छोड़ देते हैं। जब गोवंश उन खेतोंमें चरता और घूमता है तो गोमय

एवं गोमूत्रका त्याग भी करता है। बरसातका पानी मिलनेसे

जमीनमें उनके घटक घुलने लगते हैं। फसलों और पेड़-पौधोंकी जड़ोंतक इनके पहुँचनेकी वजहसे उन्हें प्रचुर मात्रामें गोबर-गोमूत्रकी उपलब्धि निसर्गत: प्राप्त हो जाती है। लेकिन जहाँ यह निसर्गत: उपलब्ध नहीं हो पाता,

वहाँ गोबर-गोमूत्र एवं गुड्से बना 'अमृतपानी' पौधोंको पुनर्जीवित करता है। जिनके पास गाय है, उनके लिये 'अमृतपानी' बनाना बहुत आसान है, लेकिन उसके लिये सावधानीपूर्वक

जीवाणुओंकी संख्याको बड़ी मात्रामें बढ़ाना जरूरी है। जीवाणु जब काम करनेयोग्य संख्यामें हो जायँगे तब उचित पद्धतिसे जमीनमें पौधोंके लिये उपलब्ध कराना चाहिये। हम इस पद्धतिका विज्ञान आजकी वैज्ञानिक भाषामें अगर समझ लेते हैं, तब हमारे हाथसे कोई भी

गलती अनजानेमें भी होनेकी सम्भावना नहीं रहेगी। इसलिये सर्वप्रथम जिस गोवंशका गोबर-गोमूत्र हम उपयोगमें लेनेवाले हैं, वे निरोगी हैं या नहीं—यह पश्-चिकित्सकसे जानना अत्यावश्यक है। हमारे पास दुध

देनेवाली गाय, बिना दुध देनेवाली गाय, जिसे अब बच्चा नहीं होगा (भाकड़) गाय एवं बैलका गोबर उपलब्ध होता है। साथ ही बछिया एवं बछड़ोंका भी गोबर रहता

है। इन सबका गोमय और गोमूत्र अमृतपानी बनानेमें काममें लिया जा सकता है। 🛊 यह गोमूत्र गोवंशसे सीधा इकट्ठा किया जाना चाहिये। 🛊 गौशालामें नीचे गिरा हुआ गोमूत्र इस कार्यके

🛊 गोमूत्र कितना भी पुराना हो समस्या नहीं है।

लिये कभी भी नहीं लेना चाहिये।

रखनेसे गोमूत्रमें धातुके अंश आ जायँगे, जो जमीनको नुकसान पहुँचा सकते हैं। अत: गोमूत्र रखनेहेतु अच्छे प्रकारके प्लास्टिकका बना पात्र थोड़े समयके लिये

िभाग ९२

उपयोग किया जा सकता है। अधिक समयके लिये काँच, चीनी-मिट्टी एवं मिट्टी-पात्रका ही उपयोग करना चाहिये। 🛊 गोमूत्रमें २.५ मात्रामें यूरिया, अन्य खनिज २.५

मात्रामें रहते हैं, शेष जलकी मात्रा होती है। गोमूत्र सिर्फ लाभदायक जीवाणुओंको ही बढ़ने देता है, अन्य हानिकारक जीवाणुओंको खत्म करता है। अत: इसमें

विशेष शुद्धता गोमूत्रकी ही रखी जाती है। 🔹 गोबर स्वस्थ भारतीय गोवंशका ही लेना चाहिये। 🔹 गोबर उठाते समय ऊपरका भाग उठाकर नीचेकी सतहको छोड़ देना चाहिये; क्योंकि हमें गोबरमें मौजूद

लाभदायक जीवाणुओंकी संख्याको ही बढ़ाना है। अगर

हम सम्पूर्ण गोबरको उठाते हैं, तब जमीनमें उपस्थित अन्य जीवाणु भी उसमें आ सकते हैं, जिसमें कुछ शायद हमारे लिये नुकसान पहुँचानेवाले हो सकते हैं।

🕏 गोबरमें कार्बन एवं हमारे लिये अत्यावश्यक जीवाणु होते हैं। 🔹 इसमें रायझोबियम (यह हवासे नाइट्रोजनको लेकर जमीनमें स्थिर करता है), अझेटोबॅक्टर, ट्रायकोडर्मा

🔹 गोबर घना, पतली परत लिया, लकीरोंवाला हो।

एवं पीएसबी (फॉस्फेट सोल्यूबल बैक्टेरिया) उपस्थित होते हैं। साथ ही और भी जीवाणु हैं, जो भूमिमें उपस्थित कार्बनको पौधोंके लिये अत्यावश्यक स्थितिमें

उपलब्ध करानेमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह सब मिलकर जमीनमें पहुँचनेके बाद पौधोंके लिये पोषक तत्त्व उपलब्ध कराते हैं। अत: इस पद्धतिसे

गोबर एवं गोमूत्रके घटक पौधोंतक पहुँचते हैं। इस पद्धतिद्वारा उत्पादित की गयी खेतीकी फसल मनुष्य (शरीर)-के पोषणके लिये सर्वोत्तम है।

संख्या ११ ] खेतीमें अमृतपानीका विशेष लाभ ४			
<u></u>			
🛊 अच्छे दर्जेका गुड़ हो।	🕏 अमृतपानी जमीनमें देनेके पूर्व हमें भूमिमें मौजूद		
🛊 गुड़ जीवाणुओंकी तीव्र दरसे वृद्धि करता है	। नाइट्रोजन एवं कार्बनका अनुपात जान लेना आवश्यक		
🔅 जिस बकेटमें हम अमृतपानी बनाने जा रहे हैं	, है। कार्बनका भूमिमें कम-से-कम ०.१ प्रतिशतमें रहना		
वह इतनी बड़ी हो कि ऊपर एक-चौथाई भाग हवावे	ज अच्छे परिणामके लिये आवश्यक है।		
लिये खुला रहे। यह न रखनेसे अमृतपानी तैयार होते	• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •		
समय उफान-जैसा ऊपर आकर बह सकता है।	देना बन्द करते हैं, उसी समय अमृतपानी देना भी		
अमृतपानी बनानेकी विधि—	बन्द करना है।		
गोबर — १० किलोग्राम	🔹 प्रत्येक १५ दिनके अन्तरालमें अमृतपानी उपर्युक्त		
गोमूत्र — १० लीटर	पद्धतिसे फसलको देना चाहिये।		
गुड़ — २५० ग्राम	捻 सब्जियोंमें भी इसी पद्धतिसे अमृतपानी देना है।		
🕏 जिस बकेटमें हम 'अमृतपानी' बनाने जा रहे हैं	,		
उसे सर्वप्रथम थोड़े-से गोमूत्रसे अच्छेसे धो लेना चाहिये			
🕏 इस निर्जन्तुक बकेटमें मात्रावत् गोबर, गोमूः			
एवं गुड़को अच्छेसे मिलायें। यह घोल तैयार होनेवे	•		
उपरान्त पतला कपड़ा या कागजसे बकेटका मुँह बाँध	•		
दें। अगर कागजसे बन्द करते हैं तब उसमें छोटे-छोर	टे रहता है।		
२०-२५ छेद करना आवश्यक है। अगर छेद नहीं करेंग	•		
तब गोबरसे सतत रूपसे निकल रही मीथेन गैस बाह	र 🔹 जमीनमें कार्बन बढ़ता है।		
नहीं निकल पायेगी। वह ऊपरकी सतहपर जमा रहेगी	। 💀 हवासे नाइट्रोजनकी मात्रा जमीनमें स्थिर हो		
मीथेन गैसके एण्टी मायक्रोबिअल होनेके कारण वह	ाँ जाती है।		
जीवाणुओंकी संख्या नहीं बढ़ पायेगी।	🕏 जमीनमें कार्बन बढ़नेके कारण भूमिमें पानी		
उपरोक्त मिश्रित द्रवको प्रतिदिन एक निश्चि	•		
समयमें ६-७ बार सीधी एवं उलटी दिशामें घड़ीवे			
कॉॅंटे-जैसा किसी एक लकड़ीसे घुमाना आवश्यक है			
साधारणतः यह प्रक्रिया छःसे सात दिनमें पूप			
होती है। इसका उपयोग सातवें दिनसे करना चाहिये	_		
बारहवें दिनके बाद जीवाणु खत्म होना शुरू होते हैं			
अत: उसके पहले उनका जमीनमें पहुँचना जरूरी होता है			
जमीनमें पहुँचानेकी प्रक्रिया—	नागपुरद्वारा भी वैज्ञानिक-पद्धतिसे कार्य किया गया है।		
🛊 अगर हम उपरोक्त मात्राका अमृतपानी बनाते हैं			
तब उतनी मात्रा आधे एकड़ भूमिको एक समयग			
पानीके साथ देना है।	अच्छे स्वास्थ्यहेतु तैयार होता है।		
🔅 जब भी फसलको पानी देना है, तब उपर्युत्त			
अमृतपानीके साथ दिया जा सकता है।	भूगर्भसे प्राप्त होनेवाला जल भी विषरहित प्राप्त होगा।		
🔅 अमृतपानी देते समय भूमिमें बीससे तीस प्रतिश			
नमी होना जरूरी है।	सुरक्षाके लिये अत्यावश्यक है।		

साधनोपयोगी पत्र (१) एक ही हैं। उसी परतम गोलोकधामकी अधीश्वरी श्रीराधारानी

# हैं, जो श्रीकृष्णसे नित्य अभिन्न होनेपर भी श्रीकृष्णको

श्रीराधा-कृष्ण एक ही तत्त्व हैं प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका कृपापत्र

मिला। उत्तरमें निवेदन है कि श्रीराधा तथा श्रीकृष्ण वस्तुत:

एक ही तत्त्वके दो नाम-रूप हैं। इनका नित्य अभिन्न सम्बन्ध है। अत: इनके विवाह होने, न होनेका प्रश्न ही

नहीं उठता। विवाह तो लौकिक जीवोंमें होता है। तथापि ब्रह्मवैवर्तपुराणमें इनके विवाहकी बात भी आती है। इनकी

लीला नित्य है और नित्य ही ये अपने ही एक तत्त्वके दो स्वरूपोंमें लीला-विहार करते रहते हैं।

समस्त दिव्य धामोंमें प्रमुख सिच्चत्-परमानन्दमय गोलोकधाम है, वही समस्त ब्रह्माण्डका आत्मा है। उसीमें

अनन्त ब्रह्माण्ड नित्य अनुप्राणित होते रहते हैं। वह नित्य सच्चिदानन्दमय परधाम सबसे विलक्षण और सर्वोपरि होनेपर भी सर्वत्र व्याप्त और सबमें स्थित है। इतनेपर भी उसकी

पादविभूति—एक अंशमें ही समस्त प्राकृत लोकोंकी परिसमाप्ति हो जाती है। इनसे सर्वथा अस्पृष्ट जो त्रिपादविभूति है, वह अनैसर्गिक अप्राकृत सच्चिदानन्दमय परमधाम है।

वहीं साकेत, वैकुण्ठ, कैलास आदिके रूपमें भक्तोंके अनुभवमें आता है। उस परमोज्ज्वल, परम मधुर, परम कल्याणमय, परम सुन्दर, सर्वातिशायी नित्य गोलोकधाममें ही वृन्दावन, मथुरा, गोकुल, नन्दग्राम, बरसाना, गिरिराज तथा विरजा

और यमुना आदि दिव्य शाश्वत प्रदेश हैं। हमारा यह मर्त्यधाम पार्थिव है, ठोस है, यहाँ एकमें दूसरा नहीं रह सकता। जहाँ काशी है, वहाँ प्रयाग नहीं है-दोनों

पृथक्-पृथक् हैं, परंतु दिव्य सिच्चत्-परमानन्दमय धाम इस प्रकारका जड़ तथा ठोस नहीं है, वह कैसा है—इसे वाणीसे

नहीं समझा जा सकता। परंतु इतना जान लेना चाहिये कि भगवान्की भाँति ही वह सर्वशक्तिसम्पन्न, सर्वाधार, दिव्य,

प्रकाशमय, तेजोमय, नित्य सत्य भावमय है। उसीमें समस्त

दिव्य लोकोंका सत्य स्फुरण है। वे साकेत, वैकुण्ठ, कैलास

नित्य परमानन्द प्रदान करनेवाली उनकी ह्लादिनी शक्ति हैं। श्रीकृष्णके स्वरूपका आधार वे हैं और श्रीकृष्ण उनके स्वरूपके आधार हैं। वे नित्य प्रिया-प्रियतम हैं। कभी एक

> क्षणके लिये भी उनका वियोग नहीं होता। पर यह प्रिया-प्रियतमभाव कैसा है—इसे समझनेके लिये कोई भी लौकिक दृष्टान्त समीचीन और उपयुक्त नहीं है, जैसे भगवान् सर्वविलक्षण निरुपाधि और अतुलनीय तथा अचिन्त्य हैं, वैसे

ही यह प्रिया-प्रियतमभाव भी अतुलनीय और अचिन्त्य है। इस प्राकृत जगत्में जो इन सबका अवतरण हुआ था, कहा गया है कि वह इनके दिव्य राज्यमें इनकी एक

स्वप्नलीला थी। विचित्र लीलासम्पादिनी भगवानुकी योगमाया सदा लीलावैचित्र्य आयोजनमें ही लगी रहती है। प्रिया-प्रियतम निकुंजमें शयन कर रहे हैं। इसी समय प्रिया श्रीराधारानीके सामने योगमाया एक दृश्य उपस्थित करती

हैं। श्रीजीको स्वप्न होता है—'मैं भारतमें श्रीवृषभानुपुरीमें कीर्तिदा माताके अंकमें बालिका-रूपसे प्रकट हुई हूँ, इत्यादि।' स्वप्न मनका संकल्प है। श्रीजी सदा सत्य-संकल्प हैं, अत: उनके उस संकल्पके अनुसार भारतवर्षके व्रजमण्डलान्तर्गत वृषभानुपुरीमें उनके प्रादुर्भावकी लीला

वर्णन किया है।

सम्पन्न होने लगी। इसी प्रकार योगमायाके संकेतसे श्रीकृष्णने भी संकल्पसे ही अवतरण किया। यहाँकी इस लीलामें श्रीकृष्ण ग्यारह वर्षकी आयुतक ही व्रजमें विराजे। श्रीजीकी

आयु भी लगभग इतनी-सी ही थी। कहते हैं कि वे श्रीकृष्णसे पन्द्रह दिन छोटी थीं। इसी बाल्यकालमें व्रजमें

इन दोनोंमें प्रथम दर्शन, पूर्वराग, संयोग आदिकी समस्त रसलीलाएँ सम्पन्न हुईं। लोकदुष्टिमें इनकी सगाईकी चर्चा चल रही थी। किसी-किसी भक्तने इनके विवाहका भी

हमारे पास एक पुरानी हस्तलिखित पुस्तक है, जिसमें अनिस्पर्वसांक्षणस्यां इत्तरा के इत्या के इत्या के इत्या के इत्या के इत्या के अधिक विश्व के अधिक विश्व के अधिक व

संख्या ११] साधनोप	•
**************************************	
अनुसार भी लोगोंकी दृष्टि बचाकर साक्षात् श्रीब्रह्माजीने	सिद्धियोंके द्वारा सुख-भोग प्राप्त कर सकता है। परंतु
वृन्दावनमें सिखयोंके सामने इन शाश्वत प्रिया-प्रियतमका	वह परमात्माकी प्राप्तिके मार्गमें विघ्न ही है। परमात्माको
विवाह भी करवा दिया था। फिर श्रीकृष्ण मथुरा पधारे	प्राप्त योगीमें ऐसी इच्छा नहीं होती। भगवत्प्राप्त भक्त
और तदनन्तर द्वारका गये।	या योगी भगवान्के इच्छानुसार तो सब कुछ कर सकते
तत्त्वतः श्रीकृष्णस्वरूपिणी नित्य कृष्णसंगिनी	हैं। पर वह करना भी न करना ही है।
श्रीकृष्णप्रिया श्रीराधारानी प्रेमयोगिनी विरहिणीका प्रेमानुरागमय	(२) परमार्थके लिये धर्मपथपर चलना और
जीवन बिताने लगीं। अवतारलीला सम्पन्न होनेमें यहाँके	परमार्थके लिये ही योगसाधन करना सर्वोत्तम है।
परिमाणके अनुसार लगभग सवा सौ वर्ष लग गये। तत्पश्चात्	(३) एक ही पुरुष समस्त जगत्का सुधार कर
परमधाम-गमनसे पूर्व ही भगवान् श्रीकृष्णने व्रजमें आकर	सकता है, यदि भगवान् उसे ऐसी शक्ति और मित दे दे।
समस्त गोप-गोपियोंको तथा व्रजमण्डलको गोलोकधाममें	(४) भगवान् रामकी भाँति पापियोंको मारनेका
भेज दिया। इतना सब देख चुकनेपर श्रीराधाजीका स्वप्न	अधिकार भगवान् रामको ही है। वे साक्षात् परमात्मा हैं।
भंग हुआ। उन्होंने देखा—'मेरी आँख लग गयी, इतनेमें	उनकी देखा-देखी किसीको मारनेकी बात सोचना भी
ही क्षणभरमें मैंने यह स्वप्न देखा लिया था। वस्तुत: तो मैं	पाप ही है। हमें तो यही भगवान्से प्रार्थना करनी चाहिये
प्रियतम श्रीकृष्णके पास ही हूँ। न कहीं गयी, न आयी।'	और यही भावना करनी चाहिये कि भगवान् सबको
श्रीकृष्ण तथा अन्य सबने लीलानुरोधसे यही अनुभव किया।	सद्बुद्धि दें, सभी धर्मके पवित्र मार्गपर चलें, सभी सबका
यह एक प्रसंगकी कथा है। कहनेका तात्पर्य इतना	हित करें, सभी सुखी हों, सभी कल्याणको प्राप्त हों और
ही है कि श्रीराधाकृष्ण नित्य सनातन परस्पर-अभिन्न	सभी भगवान्की कृपा प्राप्त करें। इसीमें अपना तथा
प्रिया-प्रियतम हैं। इनका स्वरूप अनिर्वचनीय है—अचिन्त्य	सबका कल्याण है। शेष भगवत्कृपा।
है। इनकी परम कृपासे ही उसका किसी-किसीको कहीं	(ξ)
कुछ आभास मिलता है। उनका आदर्श और महत्त्व यही	ध्यान कैसे लगे
जानते हैं। आपकी कृपासे पत्रका उत्तर लिखनेके बहाने	प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपने लिखा कि
प्रिया-प्रियतमकी पवित्र स्मृति हुई, इसके लिये मैं आपका	'ध्यान नहीं लगता, अतएव मेरे लिये ध्यान लगानेकी
कृतज्ञ हूँ। शेष भगवत्कृपा।	चेष्टा करनी चाहिये', सो मैं चेष्टा करनेवाला कौन हूँ ?
(२)	भजन और सत्संग बहुत अधिक होनेसे ध्यान आप ही
परमार्थके लिये धर्मपर चलना उत्तम है	लग सकता है। मैं क्या चेष्टा करूँ ? इसमें तो आपकी
प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका पत्र	चेष्टा ही विशेष काम कर सकती है। जहाँ सत्संग होता
मिला। आपके प्रश्नोंका उत्तर नीचे लिखा जा रहा है—	हो, वहाँ चाहे जैसे भी कामको छोड़कर जाना चाहिये
(१) सच्चा संन्यासी ऐश्वर्य, सुख-भोग और	और ध्यानकी बातें सुनकर उसी समय उसी तरह ध्यान
कीर्तिको कामना नहीं कर सकता। संन्यासीका अर्थ ही	लगानेकी चेष्टा करनी चाहिये। ध्यानवाले पुरुषोंके
है—सब कुछका सब प्रकारसे त्याग करनेवाला। जिसके	समीप बैठकर ध्यान लगाना चाहिये, ध्यानमें जो विघ्न
मनमें सुख-भोग और कीर्तिकी कामना है, वह सर्वत्यागी	हो सो उन भगवान्के भक्तोंको कहना चाहिये। फिर
यानी संन्यासी नहीं है। संन्यासी साधक यदि ऐसी	·
कामना करता है तो उसका पतन होता है। योगी	
——————————————————————————————————————	<b>▶••</b>

कल्याण

## व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७५, शक १९४०, सन् २०१८, सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त-ऋतु, मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष तिथि नक्षत्र दिनांक मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि मिथुनराशि रात्रिशेष ५।१ बजेतक। प्रतिपदादिनमें १०। ३४ बजेतक शिन रोहिणी सायं ५।३२ बजेतक २४ नवम्बर मृगशिरा 🗤 ४। ३० बजेतक भद्रा रात्रिमें ८।१ बजेसे। द्वितीया " ८।५९ बजेतक रवि २५ " भद्रा प्रातः ७। ३ बजेतक, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय २६ ,,

२७ ,,

76 "

२९ "

30 11

१ दिसम्बर

२ ,,

3 ,,

४ ,,

ξ "

दिनांक

८ दिसम्बर

9 "

20 "

११ "

१२ "

१३ "

28 "

,,

,,

रात्रिमें ८।१७ बजे।

कर्कराशि दिनमें ८।४ बजेसे।

मूल दिनमें ८। ४३ बजेतक।

**भद्रा** दिनमें ३।४० बजेतक।

सूर्य सायं ४। ३५ बजे। भौम प्रदोषव्रत।

रात्रिमें १०।५ बजेसे।

भद्रा रात्रिमें १२।१६ बजेसे, मूल दिनमें १२।२ बजेसे।

भद्रा दिनमें ११।५ बजेतक, सिंहराशि दिनमें १०।२० बजेसे।

**भद्रा** रात्रिमें ४।३५ बजेसे, **कन्याराशि** दिनमें १२।५२ बजेसे।

तुलाराशि सायं ४। ३२ बजेसे, उत्पन्ना एकादशीव्रत (सबका), ज्येष्ठाका

भद्रा दिनमें १२। १५ बजेसे रात्रिमें १२। ८ बजेतक, वृश्चिकराशि

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

श्राद्धकी अमावस्या, मूल रात्रिमें ४।५० बजेसे।

अमावस्या, धनुराशि रात्रिशेष ६। २ बजेसे।

आर्द्रा दिनमें ३।११ बजेतक तृतीया प्रातः ७।३ बजेतक सोम

पंचमी रात्रिमें २।३८ बजेतक मंगल पुनर्वसु 🕠 १।४१ बजेतक पुष्य " १२। २ बजेतक षष्ठी " १२।१६ बजेतक बुध

सप्तमी " ९ । ५४ बजेतक गुरु

आश्लेषा " १०।२० बजेतक मघा 🥠 ८।४३ बजेतक अष्टमी 😗 ७।३८ बजेतक शक्र

पू०फा० प्रातः ७।१२ बजेतक शनि

नवमी सायं५ ।३१ बजेतक

रवि हस्त रात्रिमें ४।५२ बजेतक

दशमी दिनमें ३।४० बजेतक

सोम चित्रा 🥠 ४। १२ बजेतक

एकादशी 😗 २ ।७ बजेतक

|मंगल|स्वाती 🛷 ३।५५ बजेतक

द्वादशी '' १२।५७ बजेतक

विशाखा 🦙 ४। ७ बजेतक त्रयोदशी '' १२।१५ बजेतक बुध

चतुर्दशी '' १२।१ बजेतक । गुरु अनुराधा 🦙 ४।५० बजेतक ज्येष्ठा रात्रिशेष ६।२ बजेतक अमावस्या " १२।१८ बजेतक शुक्र

सं० २०७५, शक १९४०, सन् २०१८, सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त-ऋतु, मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष

तिथि वार नक्षत्र

प्रतिपदा दिनमें १।९ बजेतक शनि मूल अहोरात्र रवि मूल प्रातः ७। ४२ बजेतक

द्वितीया 😗 २। २७ बजेतक सोम

तृतीया सांय ४।१० बजेतक पु० षा० दिनमें ९।४८ बजेतक चतुर्थी रात्रिमें ६।११ बजेतक मंगल उ०षा० 🗤 १२।१२ बजेतक पंचमी 🤈 ८। २१ बजेतक श्रवण 🗤 २। ४७ बजेतक बुध

धनिष्ठा सायं ५।२३ बजेतक

गुरु शुक्र

अष्टमी 辨 २। ४ बजेतक शनि

सप्तमी " १२। २६ बजेतक शतभिषा रात्रिमें ७। ४९ बजेतक

षष्ठी 😗 १०। २९ बजेतक

मंगल

बुध

गुरु

शुक्र

नवमी 🗤 ३ । १४ बजेतक रवि

दशमी 🗤 ३ ।५८ बजेतक

एकादशी 꺄 ४। ९ बजेतक

द्वादशी <table-cell-rows> ३। ४९ बजेतक

त्रयोदशी 🕖 २। ५९ बजेतक

चतुर्दशी '' १। ४५ बजेतक

पूर्णिमा" १२।८ बजेतक

पु०भा० 🗤 ९।५८ बजेतक

उ०भा० 🗤 ११।४३ बजेतक

अश्वनी 🗤 १।५० बजेतक

|सोम|रेवती 🗤 १।२ बजेतक

भरणी 🗤 २।८ बजेतक

कृत्तिका ,, १।५७ बजेतक

रोहिणी 🗤 १।२० बजेतक

मृगशिरा 🗤 १२।२५ बजेतक

१७ "

१८ "

१९ "

२० "

२१ "

२२ "

(सबका), श्रीगीता-जयन्ती, मूल रात्रिमें १।५० बजेतक।

भद्रा सायं ४। ३ बजेसे रात्रिमें ४। ९ बजेतक, मोक्षदा एकादशीव्रत

**मेषराशि** रात्रिमें १।२ बजेसे, **पंचक समाप्त** रात्रिमें १।२ बजे।

१५ " १६ "

४३ बजेसे।

महानन्दानवमी, धनु-संक्रान्ति रात्रिमें ६। २५ बजे, मूल रात्रिमें ११।

भद्रा रात्रिमें १२।२६ बजेसे। भद्रा दिनमें १।१५ बजेतक, मीनराशि दिनमें ३।२६ बजेसे।

वृषराशि दिनमें ८।५ बजेसे, प्रदोषव्रत।

**पूर्णिमा, सायन मकरका सूर्य** दिनमें १। २३ बजे।

भद्रा दिनमें १२। ५६ बजेतक, मिथुनराशि दिनमें १२। ५३ बजेसे,

भद्रा रात्रिमें १।४५ बजेसे।

कुम्भराशि रात्रिमें ४।५ बजेसे, पंचकारम्भ रात्रिमें ४।५ बजे, श्रीरामविवाह। श्रीस्कन्दषष्ठी।

**भद्रा** रात्रिशेष ५।१० बजेसे,**मकरराशि** सायं ४।२४ बजेसे। भद्रा रात्रिमें ६।११ बजेतक, **वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।** 

मूल प्रातः ७।४२ बजेतक।

संख्या ११ ] व्रतोत्सव-पर्व व्रतोत्सव-पर्व

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

## सं० २०७५, शक १९४०, सन् २०१८-१९, सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त-ऋतु, पौष कृष्णपक्ष

दिनांक

तिथि

सप्तमी रात्रिमें ६ ।४२ बजेतक

अष्टमी '' ७। २२ बजेतक

नवमी '' ७।३० बजेतक

एकादशी '' ६। १७ बजेतक

द्वादशी सायं ४।५९ बजेतक

त्रयोदशी दिनमें ३।२१ बजेतक

चतुर्दशी ᢊ १। २४ बजेतक

पूर्णिमा" ११ ।१५ बजेतक

दशमी 🦙 ७।८ बजेतक |बुध

रवि

गुरु

शुक्र

शनि

रवि

सोम ।

सोम

उ०भा० प्रात: ७।६ बजेतक

रेवती दिनमें ८।३१ बजेतक

भरणी 🗤 ९।५० बजेतक

कृत्तिका 🗤 ९।४५ बजेतक

रोहिणी 🗤 ९।१४ बजेतक

मृगशिरा 🗤 ८। २३ बजेतक

आर्द्रा प्रात: ७।११ बजेतक

पुष्य रात्रिमें ४।१० बजेतक

मंगल अश्वनी 🗤 ९। २६ बजेतक

प्रतिपदारात्रिमें १०। १३ बजेतक रिव

वार

नक्षत्र

आर्द्रा रात्रिमें ११।९ बजेतक |२३ दिसम्बर

द्वितीया 🤫 ८। ४ बजेतक	सोम	पुनर्वसु 🦙 ९। ४१ बजेतक	२४ "	<b>कर्कराशि</b> सायं ४।३ बजेसे।
तृतीया सायं ५ । ४७ बजेतक	मंगल	पुष्य ः ८।५ बजेतक	२५ ,,	भद्रा प्रातः ६ ।५५ बजेसे सायं ५ ।४७ बजेतक, <b>संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत,</b>
				चन्द्रोदय रात्रिमें ८।११ बजे, <b>मूल</b> रात्रिमें ८।५ बजेसे।
चतुर्थी दिनमें ३।२५ बजेतक	बुध	आश्लेषा 🕖 ६ । २४ बजेतक	२६ ,,	सिंहराशि रात्रिमें ६। २४ बजेसे।
	गुरु	मघा सायं ४।४६ बजेतक		मूल सायं ४। ४६ बजेतक।
षष्ठी " १०।४९ बजेतक	शुक्र	पू०फा० दिनमें ३।१३ बजेतक	२८ ,,	<b>भद्रा</b> दिनमें १०। ४९ बजेसे रात्रिमें ९। ४७ बजेतक, <b>कन्याराशि</b>
				रात्रिमें ८।५३ बजेसे।
सप्तमी '' ८।४४ बजेतक	शनि	उ०फा० 🗤 १।५१ बजेतक	२९ ,,	पू०षा० का सूर्य रात्रिमें ७। २३ बजे।
अष्टमी प्रातः ६। ५४ बजेतक	रवि	हस्त 🗥 १२। ४६ बजेतक	३० ,,	तुलाराशि रात्रिमें १२।२४ बजेसे।
दशमी रात्रिमें ४। १७ बजेतक	सोम	चित्रा " १२।१ बजेतक	३१ ,,	भद्रा सायं ४।५० बजेसे रात्रिमें ४।१७ बजेतक।
एकादशी " ३।३६ बजेतक	मंगल	स्वाती <table-cell-rows> ११।३९ बजेतक</table-cell-rows>	१ जनवरी	वृश्चिकराशि रात्रिशेष ५।४३ बजेसे, सफला एकादशीव्रत ( सबका ),
				सन् २०१९ प्रारम्भ।
द्वादशी '' ३।२३ बजेतक	बुध	विशाखा " ११।४४ बजेतक	٦ ,,	× × ×
		1		
त्रयोदशी '' ३।४४ बजेतक	गुरु	अनुराधा " १२।१९ बजेतक	३ ,,	भद्रा रात्रिमें ३।४४ बजेसे, प्रदोषव्रत, मूल दिनमें १२।१९ बजेसे।
	_	अनुराधा " १२।१९ बजेतक ज्येष्ठा " १।२४ बजेतक	३ '' ४ ''	भद्रा रात्रिमें ३।४४ बजेसे, प्रदोषव्रत, मूल दिनमें १२।१९ बजेसे। भद्रा सायं ४।११ बजेतक, धनुराशि दिनमें १।२४ बजेसे।
चतुर्दशी 😗 ४।३८ बजेतक	शुक्र	_		= 1
चतुर्दशी   '' ४।३८ बजेतक अमावस्या रात्रिशेष ५।५७ बजेतक	शुक्र शनि	ज्येष्ठा ; १। २४ बजेतक मूल ; १। ५८ बजेतक	٧ ,, ५ ,,	<b>भद्रा</b> सायं ४।११ बजेतक, <b>धनुराशि</b> दिनमें १।२४ बजेसे।
चतुर्दशी   '' ४।३८ बजेतक अमावस्या रात्रिशेष ५।५७ बजेतक	शुक्र शनि	ज्येष्टा " १। २४ बजेतक मूल " २। ५८ बजेतक ४०, सन् २०१९, सूर्य	٧ ,, ५ ,,	भद्रा सायं ४।११ बजेतक, धनुराशि दिनमें १।२४ बजेसे। अमावस्या, मूल दिनमें २।५८ बजेतक।
चतुर्दशी '' ४।३८ बजेतक अमावस्या रात्रिशेष ५।५७ बजेतक सं० २०७५, शक तिथि	शुक्र शनि <b>१९</b> ४	ज्येष्टा (११२४ बजेतक) मूल (११४८ बजेतक) ४०, सन् २०१९, सूर्य नक्षत्र	४ ,, ५ ,, दक्षिण दिनांक	भद्रा सायं ४।११ बजेतक, धनुराशि दिनमें १।२४ बजेसे। अमावस्या, मूल दिनमें २।५८ बजेतक। यन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, पौष शुक्लपक्ष
चतुर्दशी '' ४।३८ बजेतक अमावस्या रात्रिशेष ५।५७ बजेतक सं० २०७५, शक तिथि प्रतिपदा अहोरात्र प्रतिपदा अहोरात्र	शुक्र शिन <b>१९४</b> <b>वार</b> रिव सोम	ज्येष्टा '' १। २४ बजेतक मूल '' २। ५८ बजेतक ४०, सन् २०१९, सूर्य नक्षत्र पू० षा०सायं ४। ५९ बजेतक उ०षा० रात्रिमें ७। १९ बजेतक	४ ,, ५ ,, दक्षिण दिनांक	भद्रा सायं ४।११ बजेतक, धनुराशि दिनमें १।२४ बजेसे। अमावस्या, मूल दिनमें २।५८ बजेतक। यन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, पौष शुक्लपक्ष मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
चतुर्दशी '' ४।३८ बजेतक अमावस्या रात्रिशेष ५।५७ बजेतक सं० २०७५, शक तिथि प्रतिपदा अहोरात्र प्रतिपदा अहोरात्र	शुक्र शिन <b>१९४</b> <b>वार</b> रिव सोम	ज्येष्टा " १। २४ बजेतक मूल " २। ५८ बजेतक ४०, सन् २०१९, सूर्य नक्षत्र पू० षा०सायं ४। ५९ बजेतक	४ ,, ५ ,, दक्षिण दिनांक ६ जनवरी	भद्रा सायं ४।११ बजेतक, धनुराशि दिनमें १।२४ बजेसे। अमावस्या, मूल दिनमें २।५८ बजेतक।  ायन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, पौष शुक्लपक्ष  मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि  मकरराशि रात्रिमें ११।३४ बजेसे।  × × × × ×
चतुर्दशी '' ४।३८ बजेतक अमावस्या रात्रिशेष ५।५७ बजेतक सं० २०७५, शक तिथि प्रतिपदा अहोरात्र प्रतिपदा अहोरात्र	शुक्र शनि <b>१९४</b> <b>वार</b> रिव सोम मंगल	ज्येष्टा '' १। २४ बजेतक मूल '' २। ५८ बजेतक ४०, सन् २०१९, सूर्य नक्षत्र पू० षा०सायं ४। ५९ बजेतक उ०षा० रात्रिमें ७। १९ बजेतक	४ ,, ५ ,, दक्षिण दिनांक ६ जनवरी ७ ,,	भद्रा सायं ४।११ बजेतक, धनुराशि दिनमें १।२४ बजेसे। अमावस्या, मूल दिनमें २।५८ बजेतक।  यन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, पौष शुक्लपक्ष  मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि  मकरराशि रात्रिमें ११।३४ बजेसे।  × × ×  भद्रा रात्रिमें १२।५८ बजेसे,कुम्भराशि दिनमें ११।१२ बजेसे, पंचकारम्भ
चतुर्दशी '' ४।३८ बजेतक अमावस्या रात्रिशेष ५।५७ बजेतक सं० २०७५, शक तिथि प्रतिपदा अहोरात्र प्रतिपदा अहोरात्र प्रतिपदा प्रातः ७।४२ बजेतक द्वितीया दिनमें ९।४३ बजेतक तृतीया '' ११।५४ बजेतक	शुक्र शनि <b>१९४</b> <b>वार</b> रिव सोम मंगल बुध	ज्येष्टा   १ । २४ बजेतक मूल  २ । ५८ बजेतक <b>४०, सन् २०१९, सूर्य नक्षत्र</b> पू० षा०सायं ४। ५९ बजेतक उ०षा० रात्रिमें ७। १९ बजेतक श्रवण  १ । ५३ बजेतक धनिष्टा  १ २ । ३० बजेतक	४ ,, ५ ,, दक्षिण दिनांक ६ जनवरी ७ ,, ८ ,,	भद्रा सायं ४।११ बजेतक, धनुराशि दिनमें १।२४ बजेसे। अमावस्या, मूल दिनमें २।५८ बजेतक।  यन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, पौष शुक्लपक्ष  मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि  मकरराशि रात्रिमें ११।३४ बजेसे।  × × × ×  भद्रा रात्रिमें १२।५८ बजेसे,कुम्भराशि दिनमें ११।१२ बजेसे, पंचकारम्भ दिनमें ११।१२ बजे।
चतुर्दशी '' ४।३८ बजेतक अमावस्या रात्रिशेष ५।५७ बजेतक सं० २०७५, शक तिथि प्रतिपदा अहोरात्र प्रतिपदा अहोरात्र प्रतिपदा प्रात:७।४२ बजेतक द्वितीया दिनमें ९।४३ बजेतक तृतीया '' ११।५४ बजेतक	शुक्र शिन <b>१९४</b> <b>वार</b> रिव सोम मंगल बुध गुरु	ज्येष्टा '' १। २४ बजेतक मूल '' २। ५८ बजेतक उ०, सन् २०१९, सूर्य नक्षत्र पू० षा०सायं ४। ५९ बजेतक उ०षा० रात्रिमें ७। १९ बजेतक श्रवण '' ९। ५३ बजेतक धनिष्टा '' १२। ३० बजेतक	४ '' ५ '' दक्षिण दिनांक ६ जनवरी ७ '' ८ '' १ ''	भद्रा सायं ४।११ बजेतक, धनुराशि दिनमें १।२४ बजेसे। अमावस्या, मूल दिनमें २।५८ बजेतक।  ायन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, पौष शुक्लपक्ष  मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि  मकरराशि रात्रिमें ११।३४ बजेसे।
चतुर्दशी '' ४।३८ बजेतक अमावस्या रात्रिशेष ५।५७ बजेतक सं० २०७५, शक तिथि प्रतिपदा अहोरात्र प्रतिपदा अहोरात्र प्रतिपदा प्रातः ७।४२ बजेतक द्वितीया दिनमें ९।४३ बजेतक तृतीया '' ११।५४ बजेतक	शुक्र शिन <b>१९४</b> <b>वार</b> रिव सोम मंगल बुध गुरु	ज्येष्टा '' १। २४ बजेतक मूल '' २। ५८ बजेतक उ०, सन् २०१९, सूर्य नक्षत्र पू० षा०सायं ४। ५९ बजेतक उ०षा० रात्रिमें ७। १९ बजेतक श्रवण '' ९। ५३ बजेतक धनिष्टा '' १२। ३० बजेतक	४ '' ५ '' दक्षिण दिनांक ६ जनवरी ७ '' ८ '' १ ''	भद्रा सायं ४।११ बजेतक, धनुराशि दिनमें १।२४ बजेसे। अमावस्या, मूल दिनमें २।५८ बजेतक।  यन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, पौष शुक्लपक्ष  मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि  मकरराशि रात्रिमें ११।३४ बजेसे।  × × × ×  भद्रा रात्रिमें १२।५८ बजेसे,कुम्भराशि दिनमें ११।१२ बजेसे, पंचकारम्भ दिनमें ११।१२ बजे।

१३ "

१४ "

१५ "

१६ "

१७ "

26 "

१९ "

२० "

२१ "

भद्रा रात्रिमें ६।४२ बजेसे, मूल प्रात: ७।६ बजेसे।

मिथनराशि रात्रिमें ८।४९ बजेसे, प्रदोषव्रत।

मुल समाप्त दिनमें ९। २६ बजे। वृषराशि दिनमें ३।४८ बजेसे।

दिनमें २।४६बजे।

भद्रा प्रात: ७। २ बजेतक, मेषराशि दिनमें ८। ३१ बजेसे, पंचक

भद्रा प्रातः ६।४२ बजेसे रात्रिमें ६।१७ बजेतकः; पुत्रदा एकादशीव्रत (सबका)।

भद्रा दिनमें १। २४ बजेसे रात्रिमें १२। २० बजेतक, कर्कराशि रात्रिमें

१२।६ बजेसे, व्रतपूर्णिमा, सायन कुम्भका सूर्य रात्रिमें ९।२ बजे।

पूर्णिमा, मूल रात्रिमें ४।१० बजेसे, माघस्नानारम्भ, अभिजितका सूर्य

समाप्त दिनमें ८। ३१ बजे, मकरसंक्रान्ति रात्रिमें २।१३ बजे। खिचड़ी, खरमास समाप्त, उत्तरायण प्रारम्भ, शिशिर-ऋतु प्रारम्भ,

# कृपानुभूति

ईश्वरकृपाकी प्रत्यक्ष अनुभूति यह घटना है २० दिसम्बर २०१६ की, जब मैं

आपसमें बातचीत करने लगे और सोचने लगे कि वही और मेरे पित तीर्थयात्राके दौरान सोमनाथ ज्योतिर्लिंगके

महिला, जिसका रूप अत्यन्त तेजस्वी था और हमें जाते समय मन्दिरद्वारपर मिली थी, उसी क्षण जल लेकर क्यों

दर्शनके लिये सोमनाथ मन्दिर गये थे। शामका समय था, जब हमने सोमनाथ ज्योतिर्लिंगके दर्शन किये। वहाँ एक आयी ? वह अकेली क्यों थी ? क्योंकि उसके साथ एक

पुजारीने बताया कि पुराना सोमनाथ शिवलिंग, जिसे

स्वयं प्रकट हुआ कहते हैं—वह बगलवाले मन्दिरमें है।

उसके हम दर्शन जरूर करें। मैं और मेरे पति बहुत थके

हुए थे और घुटनोंके दर्दसे बहुत पीड़ित थे। फिर भी हमने सोचा 'चलो आये हैं तो दर्शन करते चलें'।

मन्दिरद्वारपर जाकर देखा तो शिवलिंगतक जानेके लिये नीचे लगभग १५-२० सीढियाँ हैं। मैंने सोचा कैसे

जायँगे। मेरे लिये घुटनोंके दर्दके कारण दो सीढ़ियाँ भी उतरना मुश्किल था। तभी वहाँ दो महिलाएँ जो दर्शन करके आ रही थीं मिलीं, हमसे बोलीं—'आप आये हो

तो जाओ चले जाओगे।' हम हिम्मतकर फूल-पत्र आदि लेकर नीचे गये। वहाँ एक महिला पहलेसे पूजा कर रही थी। हमारे पास शिवलिंगपर चढानेके लिये जल नहीं था। न ही वहाँ कहीं दिखायी दिया। मैंने उस

महिलाकी गड़वी ली और बहुत कोशिश की कि शायद एक बूँद ही जल निकल आये, पर जल नहीं निकला। हम दोनों बहुत मायूस हुए कि हम इतने लाचार हैं कि

एक लोटा जल भी नहीं चढा सकते। मैंने अपने पतिसे कहा—'चलो, जैसी प्रभु-इच्छा' और फूल-पत्र शिवलिंगपर चढ़ाये। उसी क्षण वही महिला जो हमें

ऊपर मिली थी। एक पानीका लोटा हाथमें लेकर शिवलिंगपर जल चढाने लगी। तभी मैंने उससे आग्रह

किया कि थोड़ा-सा जल मैं भी चढ़ा दूँ। वह तुरंत बोली जरूर और लोटा मुझे देकर गायब हो गयी। हमने जल

शिवलिंगपर चढ़ाया और भगवान्का धन्यवाद किया कि उनकी कृपासे हम उस शिवलिंगके दर्शन कर पाये। हमें

नहीं पता वह स्त्री कब आयी और कैसे गयी? हम दर्शन

महिला और थी। न ही उसके हाथमें फूल-पत्र आदि थे। न ही वह एक क्षणके लिये रुकी। जब वह हमें मिली थी तो मन्दिरसे बाहरकी ओर जा रही थी। फिर दोबारा और अकेली क्यों आयी? यदि उसे भी हमारी

तरह जल ही चढ़ाना था तो हमसे भी जरूर जल ले जानेके लिये कहती। एक और आश्चर्यकी बात हुई, जब मेरे पतिने मुझे बताया कि वे बेलपत्र शिवलिंगपर

ठीक तरह चढ़ानेकी कोशिश कर रहे थे, पर घुटनोंमें दर्द और शिवलिंग तथा उनके बीच दूरी होनेके कारण नहीं कर पाये तो उसी महिलाने स्वयं फूल-पत्रको ठीक

तरहसे शिवलिंगपर रख दिया। हमारे दिमागमें एक प्रश्नचिह्न लग गया। अन्तमें हमें विश्वास हुआ कि हो न हो माँ पार्वतीजी थीं, जिन्होंने उस महिलाके रूपमें

आकर हमारी सहायता की। मेरी जल चढानेकी और मेरे पतिकी फूल-पत्र ठीक करनेकी इच्छा पूरी की। इस घटनासे हम इसी निष्कर्षपर पहुँचे कि सच्चे मनसे

ईश्वरको याद करो तो वे पुकार अवश्य सुनते हैं। उस क्षण मैं और मेरे पति पूजा विधिवत् सम्पन्न कर सकनेमें विवश थे और माँ पार्वतीने उस महिलाके रूपमें आकर

आये, जिसे देकर हम जल मँगवा लेते, न वहाँ कोई पुजारी था न कोई सेवक और तो और हमारा तन भी

आयी। उन परमात्माको हमारा कोटि-कोटि प्रणाम! वे

न केवल हमारी मदद की, बल्कि हमें दर्शन देकर हमारा जीवन सफल बना दिया। उस समय न तो हमारे कोई सगे-सम्बन्धी, न ही हमारी जेबमें रखे हुए पैसे काम

काम न आया। आयी तो केवल ईश्वरीय कृपा काम

परमेश्वर हम सबको अपनी भक्तिका दान दें और अपनी कार्माक वर्णाहर किता प्रकार कार्य हो है अपीत से हैं अपीत से कार्य व नामा कि स्वाप के किता कार्य हैं अपीत कार्य संख्या ११] पढ़ो, समझो और करो \*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\*\* पढ़ो, समझो और करो लगा—'क्या आपने ही मेरे भाईसे दियासलाईकी (8) वाह री! अन्धी माता डिब्बियाँ ली थीं?' बाबूने कहा—'हाँ, मैने ही ली थीं।' तो लीजिये, आपकी बाकी रकम। लेकिन उसको समय ठीकसे याद नहीं है। यह घटना एक क्या हुआ? उन सज्जनने पूछा। बालकने कहा— कश्मीरी पण्डितजीने अपने वार्तालापमें सुनायी। यहाँ उन्हींके शब्दोंमें उसे प्रस्तुत किया गया है। 'बाबूजी! वह ताँगेसे टकरा गया।' सज्जन उसके प्यारा मुल्ला चौकपर एक अन्धीमाता और उसके पास गये। दोनोंको देखकर बच्चेने कहा—'बाबूजी! आपकी रकम मिल गयी ना।' बाबूने कहा—'हाँ, दो पुत्र क्रमशः आठ और दस सालके रहते थे। पिताका साया सिरसे उठ गया था। माता अन्धी थी, बेटा! मिल गयी। बडी मुश्किलसे अपना एवं बच्चोंका भरण-पोषण गम्भीर घायल-अवस्थामें ही बच्चेने सदा-सदाके करती थी। परंतु बचपनसे ही माताने अपने बच्चोंको लिये आँखें बन्द कर लीं। चोट गहरी लगी थी। ईमानदारीका पाठ पढाया था। बच्चोंके दिलमें माँके भाई बुक्का मारकर रो पड़ा। एक नि:सहाय बच्चा द्वारा पढाया पाठ अंकित था। दोनों बच्चे प्रात:काल जिसके पास रहने-खानेतकका ठिकाना नहीं, मृत्युशैय्यापर पड़ा हुआ भी नहीं भूला कि उसे किसीकी रकम ही अपने छोटेसे व्यवसायके लिये निकल पड़ते थे। एक बच्चा सडकके इस पार और दुसरा सडकके लौटानी है। उस पार खडा होकर चलते-फिरते लोगोंको हृदयका छेदन-भेदनकर देनेवाली चरित्रकी उच्चता दियासलाईकी डिब्बियाँ बेचा करते थे। एक दिनकी और ईमानदारीकी ऐसी घटना भूतलपर मिलनी बहुत बात है। एक सज्जन अपने कार्यालय जा रहे थे। दुर्लभ है। साथ ही धन्य है वह अन्धी माँ, जिसने बच्चेने आग्रह किया—'बाबूजी! दियासलाईकी डिब्बी अपने पुत्रको इतने उच्च संस्कार दिये। — सत्य उदास लेते जाइये।' उन सज्जनने कहा—'नहीं! मुझे इनकी (२) आवश्यकता नहीं है।' बच्चेने पुनः आग्रह किया, तुलसीके औषधीय गुण 'बाबुजी! घरमें काम आनेवाली चीज है, लेते जाइये। भारतीय संस्कृतिमें तुलसीको पूजनीय माना गया दो पैसेकी एक डिब्बी है।' है। यहाँतक कि प्रतिदिन प्रात:पुजनके पश्चात् तुलसीके सज्जनने फिर कहा—'मेरे पास फुटकर नहीं पौधेमें जल चढ़ाया जाता है। इन सब धार्मिक कृत्योंके है।' बच्चेने फिर कहा—'बाबूजी! मैं फुटकर आपको अलावा तुलसीमें कई औषधीय गुण भी हैं, इसके ला दूँगा। उक्त सज्जनने देखा। उसकी आँखोंमें करुणा सेवनसे कई प्रकारकी बीमारियोंसे बचा जा सकता थी, आग्रह था, तो बाबूजीने कहा—'अच्छा लाओ, है। प्राचीन ऋषि-मुनियोंने यह अनुभव किया है कि तुलसीके निरन्तर प्रयोगसे एक नहीं, सैकड़ों छोटे-छ: डिब्बियाँ दे दो।' बाबूने एक रुपया निकालकर मोटे रोगोंमें लाभ होता है। इसके पौधे जहाँ होते हैं, दे दिया, बच्चा पटरी पारकर फुटकर लेने चला गया, जब फुटकर लेकर लौट रहा था तो तेज रफ्तारसे वहाँके आस-पासका वातावरण शुद्ध और स्वास्थ्यप्रद आ रहे एक ताँगेसे टकरा गया। सम्भवत: ताँगा रहता है। तुलसीके प्रयोगसे ज्वर, जुकाम, खाँसी उसके ऊपरसे निकल गया। भीड एकजुट हो गयी। आदि अनेक बीमारियोंमें तो लाभ पहुँचता ही है, उसका भाई भी आया, उसे देखते ही बच्चेने कहा— साथ ही मनुष्यके मनमें पवित्रता, शुद्धता और भक्ति 'भाई! उसपार जो बाबू खड़े हैं, उनकी रकम लौटा भावनाएँ भी जाग्रत् होती हैं। यहाँ विभिन्न व्याधियोंमें दो,'। भाई दौड़कर गया और बाबूको देखकर कहने तुलसी-सेवनके औषधीय लाभ दिये जा रहे हैं—

४८ कल्प	गण [भाग ९२	
~ ************************************		
ज्बर	भी मुँहमें रखकर चूसते रहना भी लाभदायक है। सुबह-	
१-जुकामके कारण आनेवाले ज्वरमें तुलसीके	दोपहर-शामको दही तथा तुलसीका रस लेनेपर कैंसरमें	
पत्रोंका रस निकालकर सेवन करना चाहिये।	लाभ होता है। ऐसा नवीन शोधकर्ता बताते हैं।	
२-मलेरिया बुखारके लिये तुलसी-पत्र तथा	१०-तुलसीके पाँच पत्ते तथा दो कालीमिर्च मिलाकर	
कालीमिर्चको पीसकर, गोलियाँ बनाकर तीन-तीन घंटेमें	खानेसे वातरोगका नाश होता है।	
दो-दो गोलियाँ लेनी चाहिये।	उपर्युक्त विधिसे तुलसीका प्रयोगकर रोगोंसे छुटकारा	
खाँसी	पाया जा सकता है, यह सस्ती तथा सुलभ औषधि है,	
१-खाँसीमें तुलसीके पत्तों और अड़्साके पत्तोंका	जिससे जन-साधारण घर बैठे-बैठे ही लाभ उठा सकते	
रस बराबर मात्रामें मिलाकर सेवन करना चाहिये।	है।—इन्द्रलाल त्रिपाठी	
२–तुलसी–पत्रका रस तथा मुलहठीको मिलाकर	(\$)	
शहदके साथ चाटनेसे खाँसी ठीक होती है।	अन्तकालमें भगवत्-स्मरणकी महिमा	
अन्य व्याधियाँ	परम पिता परमात्माके दयापूर्ण विधानसे अन्तकालमें	
१–कान–दर्दमें तुलसीका रस थोड़ा गर्म करके दो–	यदि किसी भी उपायसे भगवत्-स्मरण हो जाय तो जीव	
चार बूँद कानमें टपकानेसे लाभ होता है।	(प्राणी)–की निश्चय ही सद्गति होती है।	
२-बच्चोंका पेट फूलनेपर तुलसी-पत्रका स्वरस	अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।	
एक-दो चम्मच दिनमें २-३ बार पिलानेपर आराम	यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः॥	
मिलता है।	(गीता ८।५)	
३–तुलसीके ताजे पत्तोंका रस एक तोला प्रतिदिन	घटना ९ अक्टूबर २०१७ राजस्थानके श्रीगंगानगरके	
प्रात:काल सेवन करनेसे अजीर्ण दूर होता है।	आदर्श नगर, मकान न० ६३ की है।	
४-तुलसी तथा अदरकका रस एक-एक चम्मच	बेलारामसेठी नामके एक ७० वर्षीय व्यक्ति जो	
मिलाकर दिनमें तीन बार पीनेसे पेटदर्दमें लाभ होता है।	व्यवसायसे वाहनोंमें परिचालक रह चुके थे, अपने	
५–तुलसीके पत्तोंको नींबूके रसमें पीसकर दादपर	संगी-साथियोंके संग-दोषके कारण मांस-मछली-अण्डे	
लगानेसे आराम मिलता है।	आदि खाने लगे थे। यद्यपि इनके घरमें इन चीजोंका	
६-बवासीरमें तुलसीकी जड़ तथा नीमकी निम्बोलीकी	प्रवेश नहीं था, परिवारमें अन्य सभी शाकाहारी थे।	
मींगीको सम भाग पीसकर छाछके साथ सेवन करना	शरीर-त्यागके लगभग एक वर्ष पहले वे दमा-	
लाभदायक है।	रोगके कारण सख्त बीमार हुए और सघन चिकित्सासे	
७–शरीरमें पित्ती उठ जानेपर तुलसीके बीजको	ठीक हो गये। अब पुन: अन्तकाल उपस्थित हुआ।	
पीसकर आँवलेके मुरब्बेके साथ लेना चाहिये।	उनकी चार पुत्रियोंका सीमित परिवार था। उनका	
८-कैंसरके लिये घरेलू उपायमें रोगीको १० ग्राम	स्वास्थ्य क्रमशः बिगड़ रहा था। वे भयभीत होकर	
तुलसीका रस और १० ग्राम शहद मिलाकर सुबह-	बोलने लगे—'देखो, ये मेरेको पकड़कर ले जा रहे	
दोपहर-शामको देनेसे आराम मिलता है।	हैं। मुझे साँप दीख रहे हैं, ये मेरेको काँटे चुभो रहे	
९-इसी प्रकार १० ग्राम तुलसीका रस एवं ५० ग्राम	हैं। मुझे भय लग रहा है।'	
ताजा दही (खट्टा नहीं) देनेसे कैंसरमें राहत मिलती है।	श्रीगंगानगरमें कई सज्जन परिवार सत्संग, भजन,	
इसके साथ ही एक-एक घंटेके अन्तरसे दो तुलसीके पत्ते	कीर्तनमें लगे हुए हैं, उन्होंने वहाँ एक सेवा समिति	

संख्या ११ ] पढ़ो, समझ	ो और करो ४९
**************************************	
बनायी हुई है। बेलारामजीके परिवारवालोंने समितिवालोंको	चूर्ण बना लें। दस ग्राम दूधके साथ लेनेसे कमर-दर्द
सूचना दी। उन लोगोंने वहाँ कीर्तन प्रारम्भ कर दिया।	दूर होता है।
उन्हें गंगाजल और तुलसीका अनुपान कराया गया।	🌞 एक गिलास कुनकुने पानीमें आधे नींबूका रस,
कण्ठी पहना दी। गीताजीके आठवें अध्यायका पाठ	दस बूँद अदरकका रस एवं दस ग्राम शहद मिलाकर
सुनाया गया। उनसे विशेष रूपसे कहा गया कि आप	रोज सुबह नियमितरूपसे पीनेसे मोटापेका नियन्त्रण
रामजीसे कोई सम्बन्ध जोड़ लो। इन अमृतमय उपचारोंका	करना सहज हो जाता है।
ऐसा प्रभाव पड़ा कि उनके शरीरमें कुछ शक्तिका संचार	🏘 चपातीका आटा थोड़ा मोटा प्रयोग करनेसे
हो आया। अब वे शय्यापर लेटे हुए ही दोनों हाथ	कब्जसे मुक्ति मिलती है, क्योंकि पतला आटा (मैदा)
उठाकर कीर्तन करने लगे, और बोलने लगे कि रामजी	आँतोंमें जाकर चिपक जाता है और आँतोंकी स्वाभाविक
हमारे मित्र हैं, वे मुझे लेने आ रहे हैं। मुझे बुला रहे	गतिको मन्द कर देता है और उसीसे हम कब्जका
हैं, अनेक लोगोंकी भीड़ इस आनन्दमय दृश्यको देखकर	शिकार हो जाते हैं।
स्तब्ध और प्रसन्न हो रही थी।	🏘 पानीमें भिगोया हुआ मुनक्का, किशमिश एवं
लगभग अपराह्न तीन बजे प्रेमपूर्वक भगवन्नाम-	अंजीर आहार ही नहीं वरन् औषधि भी है, इनके
कीर्तन करते हुए बेलारामजीने भगवद्धामकी यात्रा की।	नियमित सेवनसे रक्त-संचार व्यवस्थित होकर नाड़ी-
मृत्यु तो अवश्यम्भावी है, परंतु घटनासे यह निष्कर्ष	संस्थानको शक्ति प्राप्त होती है।
निकलता है कि उसे भी भगवन्नाम-स्मरणसे मंगलमय	🏘 सफेद दाग होनेपर श्यामा तुलसीके पत्तोंको
बनाया जा सकता है।—कन्हैया प्रसाद शास्त्री	गंगाजलमें पीसकर रोजाना सफेद दागोंपर मलें। कुछ ही
(%)	महीनोंमें दाग ठीक होने लगते हैं।
आयुर्वेदिक घरेलू नुस्खे	🏘 खाली पेट गुनगुने जलका सेवन करनेसे खट्टी
<ul> <li>प्रात:काल अखरोट/सजल नारियलकी गिरी</li> </ul>	एवं गन्दी डकारोंसे छुटकारा मिलता है और पेट
तीस ग्राम नियमित खानेसे घुटनोंके दर्दमें लाभ होता है	सम्बन्धी रोगोंमें लाभ होता है।
एवं इसके साथ ही त्वचा स्निग्ध होती है।	🏘 सुबह उठकर पहले थोड़ा–सा गुड़ खाएँ, फिर
🏘 शामको सात भिगोयी हुई बादामकी गिरियाँ	खुरासानी अजवायनको पानीके साथ पीसकर उस
दूसरे दिन प्रात: छीलकर (चार काली मिर्चके साथ)	जलको पी जायँ। पेटके कीड़े नष्ट हो जायँगे।
चबा-चबाकर खा लें और ऊपरसे गर्म दूध पीनेसे	🏘 कब्ज अथवा अफारा होनेपर दो चम्मच
स्मरणशक्तिमें वृद्धिके साथ-साथ आँखोंके अनेक रोग	अजवायनमें आधा चम्मच काला नमक मिलाकर पानीके
ूर हो जाते हैं।	साथ लेनेसे शीघ्र लाभ होता है।
<ul> <li>टांसिलकी सूजन और बढ़ी हुई अवस्थामें एक</li> </ul>	🏘 कब्ज होनेपर रात्रिमें सोते समय दस-बारह
चम्मच पिसी हुई हल्दी और आधा चम्मच पिसा हुआ	मुनक्के (पानीसे अच्छी तरह साफकर बीज निकालकर)
नमक एक गिलास पानीमें उबालकर उस गर्म पानीसे	दूधमें उबालकर खायें और ऊपरसे वही दूध पी लें।
दिनमें तीन बार गरारे करनेसे लाभ होता है। इससे	प्रातः खुलकर शौच लगेगा। भयंकर कब्जमें तीन दिन
गलेकी खराश या दर्दमें भी लाभ होता है।	लगातार लें, बादमें आवश्यकतानुसार कभी-कभी लें।
<ul> <li>खसखस एवं मिसरीको समभाग लेकर</li> </ul>	— <b>सत्यनारायण सामरिया,</b> सम्पर्क-०९४६०९९४८६०
· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	<b>▶••</b>

मनन करने योग्य

## आचरणभ्रष्टतासे पतन

खचाखच भर गयी है। तब दूतके मुखसे सारा वृत्तान्त

ब्रह्मवैवर्तपुराणमें कथा आती है, एक बार देवराज

इन्द्र निर्जन वनमें, एक पुष्पोद्यानमें गये थे। वहाँ उन्हें सुनकर वह गुरु बृहस्पतिके घर गया और फिर गुरु तथा

रम्भा अप्सरा मिली। तदनन्तर वे दोनों जलविहार करने देवगणोंके साथ वह ब्रह्माकी सभामें जा पहुँचा। वहाँ जाकर

लगे। इसी बीच मुनिश्रेष्ठ दुर्वासा वैकुण्ठसे कैलास जाते हुए शिष्यमण्डलीसहित वहाँ आ पहुँचे। देवराज इन्द्रने

उन्हें प्रणाम किया। मुनिने आशीर्वाद दिया। फिर भगवान्

नारायणका दिया हुआ पारिजात-पुष्प इन्द्रको देकर मुनिने

कहा—'देवराज! भगवान् नारायणको निवेदित यह पुष्प सब विघ्नोंका नाश करनेवाला है। यह जिसके मस्तकपर

रहेगा, वह सर्वत्र विजय प्राप्त करेगा और देवताओं में अग्रगण्य होकर अग्रपूजाका अधिकारी होगा। महालक्ष्मी

छायाकी तरह सदा उसके साथ रहेंगी। वह ज्ञान, तेज, बुद्धि, बल-सभी बातोंमें सब देवताओंसे श्रेष्ठ और

भगवान् श्रीहरिके तुल्य पराक्रमी होगा, परंतु जो पामर अहंकारवश भगवान् श्रीहरिको निवेदित इस पुष्पको

मस्तकपर धारण नहीं करेगा, वह अपनी जातिवालोंके सहित श्रीभ्रष्ट हो जायगा।' इतना कहकर दुर्वासाजी शंकरालयको चले गये। इन्द्रने उस पुष्पको अपने सिरपर

न धारण करके ऐरावत हाथीके मस्तकपर रख दिया। इससे इन्द्र श्रीभ्रष्ट हो गये। इन्द्रको श्रीभ्रष्ट देख रम्भा

उन्हें छोड़कर स्वर्ग चली गयी। गजराज इन्द्रको नीचे गिराकर महान् अरण्यमें चला गया और हथिनीके साथ विहार करने लगा। इसी समय श्रीहरिने उस हाथीका

मस्तक काटकर बालक (गणेश)-के सिरपर लगा दिया। उधर रम्भाके संसर्गसे जिसकी बुद्धि अत्यन्त मन्द

हो गयी थी, श्रीसे भ्रष्ट होनेके कारण जिसपर दीनता छायी हुई थी और जिसका आनन्द नष्ट हो गया था, वह इन्द्र गजेन्द्र और रम्भासे पराभृत होकर अमरावतीमें गया।

वहाँ उसने देखा कि उस पुरीमें आनन्दका नामनिशान नहीं

देवताओंसहित इन्द्रने तथा बृहस्पतिने ब्रह्माको नमस्कार

किया और भक्तिभावसे उनकी स्तुति की। तत्पश्चात् बृहस्पतिने प्रजापति ब्रह्मासे सारा वृत्तान्त कह सुनाया। उसे

सुनकर ब्रह्माने नीचे मुख करके कहना आरम्भ किया। ब्रह्माजी बोले-देवेन्द्र! तुम मेरे प्रपौत्र हो और

श्रीसम्पन्न होनेसे सदा प्रज्वलित होते रहते हो, किंतु राजन्! लक्ष्मीके समान सुन्दरी शचीके पति होनेपर भी तुम

आचरणभ्रष्ट हो जाते हो। जो आचरणभ्रष्ट होता है, उसे लक्ष्मी अथवा यशकी प्राप्ति कहाँसे हो सकती है? वह पापी तो सदा सभी सभाओंमें निन्दाका विषय बना रहता

है। रम्भाने तुम्हें हतबुद्धि बना दिया था। इसी कारण तुमने दुर्वासाद्वारा दिये गये श्रीहरिके नैवेद्यको गजराजके मस्तकपर डाल दिया। जिसके कारण तुम्हें लक्ष्मीसे रहित होना पड़ा, वह रम्भा भी तुम्हें क्षणभरमें ही त्यागकर चली गयी;

नारायणका भजन करो।

इतना कहकर ब्रह्माजीने इन्द्रको जगत्स्रघ्टा नारायणका

स्तोत्र, कवच और मन्त्र दिया। तब इन्द्र देवताओं तथा गुरुके साथ पुष्करमें जाकर अपने अभीप्सित मन्त्रका जप

राज्यकी प्राप्ति की। इस प्रकार आचरणभ्रष्टतासे इन्द्रका भी पतन हो

क्योंकि वेश्या चंचला होती है। वह धनवानोंको ही पसन्द करती है, निर्धनोंको नहीं; परंतु वत्स! जो बीत गया, वह

तो चला ही गया; क्योंकि बीता हुआ पुन: वापस नहीं आता। अब तुम लक्ष्मीकी प्राप्तिके लिये भक्तिपूर्वक

करने लगे और कवच ग्रहण करके उसके द्वारा श्रीहरिकी स्तुतिमें तत्पर हो गये और उनकी कृपासे पुन: लक्ष्मी एवं

है Handuran के अध्यानमा हो स्वर्ध के हैं में हो कि को स्वर्ध के कि सम्बर्ध के अध्यान के स्वर्ध के अध्यान के स्

## श्रीगीता-जयन्ती [ १८ दिसम्बर, २०१८ ई० ]

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मिय पश्यति । तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति॥

सर्वभृतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः। सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मिय वर्तते॥ (गीता ६। ३०-३१)

'जो पुरुष सम्पूर्ण भूतोंमें सबके आत्मरूप मुझ वासुदेवको ही व्यापक देखता है और सम्पूर्ण भूतोंको मुझ

वासुदेवके अन्तर्गत देखता है, उसके लिये मैं अदृश्य नहीं होता और वह मेरे लिये अदृश्य नहीं होता। जो पुरुष एकीभावमें स्थित होकर सम्पूर्ण भूतोंमें आत्मरूपसे स्थित मुझ सिच्चदानन्दघन वासुदेवको भजता है, वह योगी सब प्रकारसे बरतता हुआ भी मुझमें ही बरतता है।'

आजके इस अत्यन्त संकीर्ण स्वार्थपूर्ण जगत्में दूसरेके सुख-दु:खको अपना सुख-दु:ख समझनेकी शिक्षा देनेके साथ-साथ कर्तव्य-कर्मपर आरूढ करानेवाला और कहीं भी आसक्ति-ममता न रखकर केवल भगवत्सेवाके लिये

ही यज्ञमय जीवन-यापन करनेकी सत्-शिक्षा देनेवाला सार्वभौम ग्रन्थ 'श्रीमद्भगवद्गीता' ही है। इस ग्रन्थका विश्वमें

जितना अधिक वास्तविक रूपमें प्रचार-प्रसार होगा, उतना ही मानव सच्चे सुख-शान्तिकी ओर बढ सकेगा।

<mark>मार्गशीर्ष शुक्ल ११ (एकादशी), मंगलवार, दिनाङ्क १८ दिसम्बर, २०१८ ई० को श्रीगीता-जयन्तीका महापर्व दिवस</mark> <mark>है। इस पर्वपर जनतामें गीता-प्रचारके साथ ही श्रीगीताके अध्ययन—गीताकी शिक्षाको जीवनमें उतारनेकी स्थायी योजना</mark> <mark>बननी चाहिये। आजके किंकर्तव</mark>्यविमृढ मोहग्रस्त मानवके लिये इसकी बडी आवश्यकता है। <mark>इस पर्वके उपलक्ष्यमें</mark> <mark>श्रीगीतामाता तथा गीतावक्ता भगवान्</mark> श्रीकृष्णका शुभाशीर्वाद प्राप्त करनेके लिये नीचे लि<mark>खे कार्य यथासाध्य और</mark> यथासम्भव देशभरमें सभी छोटे-बडे स्थानोंमें अवश्य होने चाहिये—

(१) गीता-ग्रन्थ-पूजन। (२) गीताके वक्ता भगवानु श्रीकृष्ण तथा गीताको महाभारतमें ग्रथित करनेवाले भगवानु

व्यासदेवका पूजन। (३) गीताका यथासाध्य व्यक्तिगत और सामृहिक पारायण। (४) गीता-तत्त्वको समझने-समझानेके हेतु गीता-प्रचारार्थ एवं समस्त विश्वको दिव्य ज्ञानचक्षु देकर सबको निष्कामभावसे कर्तव्य-परायण बनानेकी महती शिक्षाके लिये इस परम पुण्य दिवसका स्मृति-महोत्सव मनाना तथा उसके संदर्भमें सभाएँ, प्रवचन, व्याख्यान आदिका आयोजन एवं भगवन्नाम-संकीर्तन आदि करना-कराना। (५) महाविद्यालयों और विद्यालयोंमें गीता-पाठ, गीतापर व्याख्यान, गीता-परीक्षामें उत्तीर्ण छात्र-छात्राओंको पुरस्कार-वितरण आदि। (६) प्रत्येक मन्दिर, देवस्थान, धर्मस्थानमें गीता-कथा तथा अपने-अपने इष्ट भगवानुका विशेषरूपसे पूजन और आरती करना। (७) जहाँ किसी प्रकारकी अडचन न हो, वहाँ श्रीगीताजीकी शोभायात्रा (जुलुस) निकालना। (८) सम्मान्य लेखक और कवि महोदयोंद्वारा गीता-सम्बन्धी लेखों और सुन्दर कविताओंके द्वारा गीता-प्रचार करने और करानेका संकल्प लेना, तदर्थ प्रेरणा देना और (९) देश, काल तथा पात्र (परिस्थिति)-के अनुसार गीता-सम्बन्धी अन्य कार्यक्रम अनुष्ठित होने चाहिये।

## <mark> गीता-दैनन्दिनी</mark> — गीता-प्रचारका एक साधन = (प्रकाशनका मुख्य उद्देश्य—नित्य गीता-पाठ एवं मनन करनेकी प्रेरणा देना।)

व्यापारिक संस्थान दीपावली/नववर्षमें इसे उपहारस्वरूप वितरित कर गीता-प्रसारमें सहयोग दे सकते हैं।

## गीता-दैनन्दिनी (सन् २०१९)-के सभी संस्करण अब उपलब्ध

पूर्वकी भाँति सभी संस्करणोंमें सुन्दर बाइंडिंग तथा सम्पूर्ण गीताका मूल-पाठ, बहुरंगे उपासनायोग्य चित्र, प्रार्थना, कल्याणकारी लेख, वर्षभरके व्रत-त्योहार, विवाह-मुहुर्त, तिथि, वार, संक्षिप्त पञ्चाङ्ग, रूलदार पृष्ठ आदि।

पुस्तकाकार — विशिष्ट संस्करण (कोड 1431 )—दैनिक पाठके लिये गीता-मूल, हिन्दी-अनुवाद, मूल्य ₹ ८०

बँगला ( कोड 1489 ), ओड़िआ ( कोड 1644 ), तेलुगु ( कोड 1714 ) प्रत्येकका मूल्य ₹ ८० पुस्तकाकार— सुन्दर प्लास्टिक आवरण (कोड 503)—गीताके मूल श्लोक एवं सूक्तियाँ मूल्य ₹६५

पॉकेट साइज— रंगीन सजिल्द आवरण (कोड 506)— गीता-मूल श्लोक, मूल्य ₹ ३५



प्र॰ ति॰ २०-१०-२०१८ रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० २३०८/५७ पंजीकृत संख्या—NP/GR-13/2017-2019

LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT | LICENCE No. WPP/GR-03/2017-2019

### ग्राहकोंसे आवश्यक निवेदन

जनवरी २०१९ का विशेषाङ्क 'राधामाधव-अङ्क'-जनवरीके प्रथम सप्ताहसे ही भेजनेका प्रयास है। रिजस्ट्रीसे विशेषाङ्क प्राप्त करनेके लिये सदस्यता-शुल्क यथाशीघ्र भेजें।

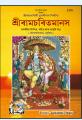
गीताप्रेसकी निजी दूकानोंपर भी सदस्यता–शुल्क छपी रसीद प्राप्त करके जमा कर सकते हैं। जिन ग्राहकोंका सदस्यता–शुल्क दिसम्बरतक प्राप्त नहीं होगा उन्हें वी०पी०पी०से विशेषाङ्क भेजा जायगा।

कल्याणके सदस्योंको मासिक अङ्क साधारण डाकसे भेजे जाते हैं। अङ्कोंके न मिलनेकी शिकायतें बहुत अधिक आने लगी हैं। सदस्योंको मासिक अङ्क भी निश्चित रूपसे उपलब्ध हो, इसके लिये सन् २०१९ के लिये <mark>वार्षिक सदस्यता-शुल्क ₹ २५० के अतिरिक्त ₹ २०० देनेपर मासिक अङ्कोंको भी रिजस्टर्ड डाकसे भेजनेकी व्यवस्था की गयी है। कल्याणके विषयमें जानकारीके लिये 09235400242 अथवा 09235400244 पर प्रत्येक कार्य-दिवसमें 9:30 बजेसे 12:30 बजेतक एवं 2:00 बजेसे 5:00 बजेतक सम्पर्क कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त 9648916010 पर SMS एवं</mark>

वार्षिक-शुल्क-₹२५०। पंचवर्षीय-शुल्क-₹१२५०

इंटरनेटसे सदस्यता-शुल्क-भुगतानहेतु gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।

### नवीन प्रकाशन—छपकर तैयार



WhatsApp की सुविधा भी उपलब्ध है।

श्रीरामचरितमानस-सटीक (कोड नं० 2175) असमिया—गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी द्वारा प्रणीत यह ग्रंथ पहली बार असमिया भाषामें प्रकाशित किया गया है। यह आदर्श गृहस्थ-जीवन, आदर्श पारिवारिक जीवन आदि मानव-धर्मके आदर्शोंका अनुपम आगार है। मूल्य ₹ २६० आदर्श कहानियाँ (कोड 2171) असमिया—इस पुस्तकमें ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराजके प्रवचनोंसे संकलित तत्त्वज्ञानकी प्रेरणास्रोत ३२ कहानियोंका सुन्दर संग्रह है। मूल्य ₹१५

क्या गुरु बिना मुक्ति नहीं ? (कोड 2170) असमिया—इस पुस्तकमें सर्वसामान्यको कलियुगी गुरुओंके मायाजालसे सावधान करते हुए वास्तविक गुरुके रूपमें परमात्माका परिचय दिया गया है। मूल्य ₹१० शाकाहार या मांसाहार फैसला आपका स्वयं करें (कोड 2167) असमिया—मुल्य ₹१०

गो–अङ्क (कोड 2176) गुजराती—इसमें गायकी महत्ता एवं उपयोगितापर उत्कृष्ट लेखोंके साथ–साथ गायके आर्थिक, वैज्ञानिक एवं धार्मिक महत्त्व तथा गोपालन एवं संरक्षणकी विधियोंका वर्णन किया गया है। मूल्य ₹२००

### कल्याण विशेषाङ्क—अभी उपलब्ध

### [ संग्रह एवं वितरण करने योग्य ]

सम्पूर्ण श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण — केवल हिन्दी [ अठारह हजार श्लोकोंका श्लोकाङ्कसहित भाषानुवाद ] — देवीभागवतके कथा-पारायण एवं अनुष्ठानके परम्पराकी दृष्टिसे इसमें पाठविधि, सांगोपांग पूजन-अर्चन-हवनका विधान तथा नवाह्मपारायणके तिथिक्रमका भी उल्लेख किया गया है। प्रथम खण्डमें १ से ६ स्कन्ध (कोड 1793)-सजिल्द, मूल्य ₹१००, एवं द्वितीय खण्डमें ७ से १२ स्कन्ध (कोड 1887)-अजिल्द, मूल्य ₹७५, की कथाएँ दी गयी हैं। इसके साथ कोई मासिक अङ्क देय नहीं है।

सेवा-अङ्क (कोड 1875)—इसमें मुख्यरूपसे सेवाका स्वरूप, सेवाकी अवश्यकरणीयता, सेवा न करनेके दुष्परिणाम, सेवाके आयाम, सेवाके बाधक एवं साधक-तत्त्व, अनन्य सेवाके विभिन्न दृष्टान्त आदि अनेक विषयोंका समावेश है। मूल्य ₹१३०। इसके साथ कोई मासिक अङ्क देय नहीं है।

नोट : दिसम्बर तक मँगवाने वालोंको [ रजिस्टर्ड पोस्टसे भेजनेका ] डाक खर्च मुफ्त।